तीर्थ श्री स्वर्णगिरि-जालोर

लेखक
साहित्य वाचस्पति श्री भँवरलाल नाहटा

प्रकाशक
प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर
बी० जे० नाहटा फाउण्डेशन, कलकत्ता

लेखक

साहित्य वाचस्पति श्री भँवरलाल नाहटा

प्रकाशक .

प्राकृत भारती अकादमी

३८२६, मोतीसिंह भौमियो का रास्ता

जयपुर-३०२००३



बो० जे० नाहटा फाउण्डेशन

४, जगमोहन मल्लिक लेन

कलकत्ता-७०० ००७

प्रथम सस्करण . संवत्सरी २०५२

३० अगस्त १९९५

१००० प्रति

मूल्य :

६० रुपये

मुद्रक :

राज प्रोसेस प्रिन्टर्स

कलकत्ता

अन्टार्टिका ग्राफिक्स लि०

कलकत्ता

प्रकाशकीय

आज भी जालोर जिला धन कुबेरो की बस्ती के लिए प्रख्यात है। प्राचीन काल मे जहा स्वर्णगिरि पर कोट्याधीशो की ही हवेलियां थी वहां उनके ध्वशावशेप खण्डहर तक नही रहे। पर जालोर जिले के अधिवासी धनाढ्य सारे भारत मे फैले हुए है उन प्रवासी महानुभावो को अपने गौरवमय मातृभूमि के इतिहास से प्रेरणा मिलेगी व जिनालयो के चित्रो के दर्शन से भी लाभान्वित होगे।

इस पुस्तक के मुद्रण मे श्री महेन्द्रराज मेहता तथा श्री रजन कोठारी का सहयोग प्रशसनीय है।

पद्मचन्द नाहटा	**देवेन्द्रराज मेहता**
अध्यक्ष	सचिव
सुशील कुमार नाहटा	**महो० विनयसागर**
सचिव	निदेशक
बी० जे० नाहटा फाउण्डेशन	**प्राकृत भारती अकादमी**
कलकत्ता	जयपुर

के पश्चात् स० १२४२ मे चौहान समरसिंह के राज्य मे भँडारी पासु के पुत्र यशोवीर ने जीर्णोद्धार कराया स० १२५६ मे तोरणादि की प्रतिष्ठा हुई। स० १२६८ के प्रेक्षामण्डप आदि बने एव स्वर्णमय कलशारोपण हुआ स० १२९६ के आबू मे लेखानुसार अष्टापद मदिर से सलग्न आदिनाथ देवकुलिका नागोर के श्रेष्ठि लाहड ने तथा प्रतिमायुक्त दो खत्तक श्रेष्ठी देवचद ने बनाये थे। यहाँ कु कुमरोला नामक जिनालय पार्श्वनाथ भगवान का था।

जिनपाल उपाध्यायकृत खरतर गच्छ वृहद् गुर्वावली से विदित होता है कि स० १३१६ माघ सुदि ६ को राजा चाचिगदेव के राज्यकाल मे शातिनाथ जिनालय पर स्वर्णमय ध्वज-दण्ड कलश स्थापित किये गये थे श्रावक धर्म प्रकरण नामक लक्ष्मीतिलकोपाध्यायकृत सचित्र ताडपत्रीय ग्रन्थ मे शातिनाथ जिनालय का चित्र है जिसे प० श्री शीलचन्द्रविजयजी महाराज ने सपादित कर प्रकाशित किया है उसमे से यहाँ के शातिनाथ जिनालय का चित्र और ग्रन्थ लिखाने वाले तीन भ्राताओ के सपत्नीक चित्र को इस ग्रन्थ मे साभार प्रकाशित किया जा रहा हैं।

इस प्रकार इस महातीर्थ की उन्नत अवस्था दिल्लीपति अलाउद्दीन खिलजी के १३६८ मे आक्रमण से शेष हुई और इन्द्र की अलकापुरी सदृश जिनालयो से मण्डित धन-कुबेरो की हवेलियो से सुशोभित स्वर्णगिरि दुर्ग एकदम वीरान हो गया हवेलियाँ और कलापूर्ण स्थापत्य मन्दिरादि ध्वस्त कर दिए अब केवल महावीर जिनालय, अष्टापद जिनालयादि बचे हैं। कुमरविहार नामशेष एक देहरी स्वरूप है। महावीर स्वामी का सौध-शिखरी जिनालय मूल गर्भगृह गूढ मण्डप सभा-मण्डप शृ गार चौकी आदि से अलकृत है।

अत्रस्थ ४-५ ध्वस्त मन्दिरो की शिल्प समृद्धि तथा शिलालेखादि जालोर नगर मे स्थित तोपखाना नामक इमारत मे लगे हुए हैं जिनकी नकल इस पुस्तक मे दी गई है।

जो जालोर खरतर गच्छ रूपी कमल का सरोवर कहा जाता था। अनेक महान् आचार्यो ने अनेक ग्रन्थो की रचना की, अनेक दीक्षाए प्रतिष्ठाए व समृद्ध धर्मकार्य हुए वह उपत्यका मे बसा हुआ एक जिले का मुख्य नगर रह गया है।

जब यह नगर जोधपुर के राज्याधिकार मे आया तो महाराजा गजसिंह के मत्री जयमल मुणोत ने जीर्णोद्धार कराके स० १६८१ मे श्री विजयदेवसूरि के आज्ञानुवर्ती श्री जयसागर गणि से प्रतिष्ठा करवाई।

अष्टापदावतार चौमुख मदिर का जीर्णोद्धार भी कराया गया और प्रवेश द्वार के सामने हाथी पर आरूढ मत्री जयमल की प्रतिकृति है। यह द्वितल मन्दिर भी कलापूर्ण और दर्शनीय है।

ओशवशे निहालस्य चौधरी कानुगस्य च,
सुतप्रतापमल्लेन प्रतिमा स्थापिता शुभा ॥५॥

श्रीऋषभ जिनप्रासादात् लिखितम्

गणिवर्य श्री महिमाप्रभसागरजी महो० ललितप्रभसागरजी व आर्याश्री जितयशाश्रीजी के दीक्षावसर पर बाडमेर से नाकोडाजी जालोर आदि स्थलो मे यात्रा हेतु जाने पर श्रीमान् उगमसीजी मोदी ने जालोर-स्वर्णगिरि तीर्थ का इतिहास लिखने का आग्रह किया। हम वहाँ कुल २ दिन ठहरे थे जो कुछ भी प्राचीन साहित्य मे देखा-सुना पुस्तिका तैयार कर भिजवायी किन्तु वहाँ अर्थाभाव के कारण प्रकाशित न होने पर वापस मगवा ली और अब प्राकृत भारती एव बी० जे० नाहटा फाउण्डेशन की ओर से सयुक्त प्रकाशित की जा रही है।

गणिवर्य श्री मणिप्रभसागरजी ने जालोर के मन्दिरो के चित्र भिजवाये उन्हे साभार इस ग्रन्थ मे दिये जा रहे हैं। काकाजी अगरचदजी नाहटा के आदेश से अस्वस्थता के समय लिख कर तैयार किया जिसे आज १५ वर्ष हो गये अत स्मृति दोष से रही अशुद्धियो के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ। इस ग्रन्थ के प्रकाशन मे मेरे कनिष्ट पुत्र श्री पद्मचन्द नाहटा ज्येष्ठ पौत्र श्री सुशीलकुमार नाहटा का परिश्रम आशीर्वादार्ह है।

विनीत

भँवरलाल नाहटा

तीर्थ श्री स्वर्णगिरि—जालोर

'कुवलयमाला' ग्रथ से प्रमाणित है कि यह नगर ईसा की आठवी शताब्दी मे आबाद था। विक्रम सवत् ८३५ मे यहाँ वत्सराज[1] नामक प्रतिहार राजा का राज्य था और आचार्य वीरभद्र द्वारा निर्मापित ऋषभदेव मन्दिर मे दाक्षिण्य-चिह्न उद्योतनसूरिजी ने इस महान् ग्रन्थ-रत्न को रच कर पूर्ण किया था। उस समय यह नगर देवालयो और लक्षाधीशो की हवेलियो से समृद्ध था। सम्राट वत्सराज के पश्चात उसका पुत्र नागभट यहाँ से राजधानी हटाकर कन्नौज चला गया पर प्रतिहार शासन तो कायम ही था। यहाँ पर कौन-कौन प्रतिहार शासक हुए यह पता नही पर दशवी से बारहवी शताब्दी तक मालवा के परमारो का यहाँ शासन था। जालोर के तोपखाने मे स्थित परमार वीसलदेव के लेखानुसार १ वाक्पतिराज, २ चन्दन, ३ देवराज, ४ अपराजित, ५ विज्जल, ६ धारावर्ष और ७ वीसल[2] नामक राजा हुए। इसके पश्चात् चौहान राजवश शक्तिशाली हुआ और उसने आक्रमण करके अपने अधिकार मे ले लिया मालूम देता है।[3] बिजोलिया के स० १२२६ के शिलालेख के अनुसार विग्रहराज ने यहाँ के राजा सज्जन को बुरी तरह परास्त कर राजधानी जावालिपुर को जलाकर नष्ट कर दिया लिखा है यत —

कृतान्तपथ सज्जो भूत्सज्जनो सज्जतो भुवः।
वंकु त कुत पालोगा (द्यत) वंकु (त) पालक. ॥२०॥

जावालिपुरं ज्वाला (पु) र कृता पल्लिकापि पल्लीव।
न दू (ड्वि) ल तुल्य रोषन्न (द्दू) लं येन सौं (शौं)र्येण ॥२१॥

अर्थात्—विग्रहराज (अर्णोराज के पुत्र) ने सज्जन नामक कुन्त (जालोर) नरेश्वर को बुरी तरह परास्त किया था और कुन्त की राजधानी जावालिपुर मे आग लगाकर उसे नष्ट कर दिया। पाली और नड्डूल नगरो का विनाश कर डाला।

---

१ An advanced History of India मे वत्सराज के पिता का नाम देवराज (देव शक्ति) लिखा है जो नागभट प्रथम का भतीजा था। उसके पिता का नाम अज्ञात लिखा है।

२. यह अभिलेख स० ११७४ (चैत्रादि ११७५) आपाढ सुदि ५ (ई० सन् १११८ ता० २५ जून) मंगलवार का है, इसमे वीसल की रानी मेरल देवी द्वारा सिन्धुराजेश्वर के मन्दिर पर स्वर्ण-कलश चढाये जाने का उल्लेख है।

३ 'राजस्थान के इतिहास का तिथि क्रम' के अनुसार चौहानो ने जालोर पर ई० सन् ११४३ अर्थात् विक्रम सवत् १२०० मे कब्जा किया था। उस समय तक यहाँ अतिम परमार राजा सज्जन का राज्य होगा।

दिल्ली के मुस्लिम शासको की आँख हरदम जालोर पर लगी रही थी। उन लोगो ने कई बार आक्रमण भी किए। सवत् १३४८ मे फिरोज खिलजी ने जालोर राज्य पर आक्रमण किया और वह साचोर तक पहुँच गया था पर गुजरात के सारगदेव वाघेला ने चौहानो की सहायता की और मुस्लिम सेना को खदेड दिया [विविध तीर्थ-कल्प] सुलतान अलाउद्दीन खिलजी ने तो वर्षों तक जालोर को हस्तगत करने के लिए सघर्ष किया था। जिसका विशद वर्णन कान्हडदे प्रबन्ध मे पाया जाता है जो आगे लिखा जायगा परन्तु उसके पहले भी जब उदयसिह राज्य करता था तब स० १३१० वसन्त पचमी के दिन सुलतान जलालुद्दीन ने जालोर पर घेरा डाला था। उस समय राउल ने सुलह करने के लिए बापड राजपूत को नियुक्त किया था। सुलतान ने छत्तीस लाख द्रम्म दण्ड स्वरूप मागे। उसने कहा मैं द्रम्म नही जानता 'पारुत्थक' दे दूगा। निकटस्थ व्यक्ति ने कहा देव ! आप स्वीकार करलें, एक पारुत्थक के आठ द्रम्म होते हैं, सुलतान ने मान लिया। पुरातन प्रबन्ध सग्रह पृ० ५१ मे ऐसा उल्लेख है। उस समय तो जालोर बच गया किन्तु अलाउद्दीन ने चितौड, रणथभौर, देवगिरि की भाँति जालोर पर अधिकार करने की सफलता प्राप्त करली और अन्त मे दुर्भाग्यवश कान्हडदेव-वीरमदेव पिता-पुत्र दहियो के छल से मारे गए और जालोर पर कान्हडदे प्रबन्धानुसार स० १३६८ मे शाही अधिकार हो गया। पर खरतरगच्छ-युगप्रधानाचार्य गुर्वावली मे स० १३७१ मे म्लेच्छो द्वारा जालोर भग होने का विश्वसनीय उल्लेख है। शाही अधिकार होने के पश्चात् भी अलाउद्दीन ने सन् १३१४ मे चित्तौड का अधिकार जालोर के सोनिगरा मालदेव को सौंपा था अत जालोर, के शासक भी ७ मालदेव ८ वनवीरदेव और ९ रणवीरदेव चौहानो के नाम मिलते हैं। चौहानो के पश्चात् जालोर पर विहारी पठानो का अधिकार हो गया। राजस्थान के इतिहास क्रम मे लिखा है कि इ० सन् १३९२ मे वीसलदेव चौहान की विधवा रानी पोपा बाई को हटाकर उसके दीवान विहारी पठान खुर्रमखाने अधिकार किया। सन् १३९४ मे गुजरात के सुल्तान से उसे सनद मिली विहारी पठानो मे १ खुर्रमखान, २ युसुफ खान ३ हसनखान, ४ सालारखान ५ उस्मानखान, ६ बुढनखान, ७ मुजाहिदखान ने राज्य किया। उसका नि सन्तान देहान्त हो जाने से गुजरात के वादशाह के भेजे हुए अमीर जीवाखान—वभ्रुखान के नेतृत्व मे सन् १५१० से १५१३ तक जालोर रहा, फिर विहारी पठानो को सौंप दिया गया। विहारी पठानो मे ८ अलीशेरखान ९ सिकन्दर खान १० गजनीखान (प्रथम), ११ सिकन्दरखान (द्वितीय) हुए। इसके वाद सन् १५३५ से सन् १५५३ तक अर्थात् १८ वर्ष तक विहारियो के हाथ से निकलकर वलोच और राठोडो के

उपरोक्त मस्जिद और 'हरजी खाडा' नामक मस्जिद जैन मन्दिरो को ध्वस्त करके ही निर्मित की गई है।

स्वर्णगिरि दुर्ग के आदिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर जिनालयो का समय-समय पर जीर्णोद्धार अवश्य हुआ पर पार्श्वनाथ जिनालय-कुमारपाल महाराजा का कुमरविहार अपनी विशालता को कायम न रख सका। वह एक छोटे से कलापूण शिखर को लिए छोटे से मन्दिर के रूप मे स्थित है प्राचीनता के नाम पर अब केवल उसकी दीवाल मे अश्वावबोध समलीविहार की पट्टिका लगी हुई है।

जालोर के पूर्व मे सीरोही राज्य, पश्चिम मे लूणी नदी, उत्तर मे पाली-बालोतरा परगना और दक्षिण मे साचोर व जसवतपुरा परगना है। इसकी लम्बाई पूर्व और पश्चिम ७२ मील, चौडाई उत्तर दक्षिण ५० मील के लगभग है। इसमे दो पहाडिया हैं, एक पश्चिम और दूसरी दक्षिण पूर्व है जो २७५७ फुट ऊची है। पश्चिम पहाडी पर सुप्रसिद्ध दुर्ग ८०० गज लम्बा और ४०० गज चौडा व १२०० फुट ऊचा है। समुद्र की सतह से इसकी ऊचाई २४०८ फुट है। जादुदान चारण के अनुसार यह किला १२४७ गज लम्बा और ४७० गज चौडा है। इसका चढाव २००० कदम है। इसके तीन दरवाजे और ५२ बुर्ज हैं। इस किले की नीव भोजने डाली और कितुक कीर्त्तिपाल व चाचिग देव व सामतसिह चौहान ने उद्धार कराया था। दीवान फतेखान (प्रथम) ने पतित भाग का मरम्मत कराके यहा एक महल का निर्माण कराया था। किले पर सूरज पोल, ध्रुव पोल, चाद पोल और लोह पोल हैं जिन्हे पार करके किले पर जाया जाता है, गढ के दर्शनीय स्थानो मे जैन मन्दिरो के अतिरिक्त मल्लिक साह की दरगाह, दहियो का गढ और वीरमदेव की चौकी है। कुमरविहार के सामने दो एक हिन्दू मन्दिर भी हैं।

प्राचीन काल से जालोर और स्वर्णगिरि की अतिशयशाली तीर्थ क्षेत्रो मे गणना की जाती थी। इस विषय के तीर्थमालाओ आदि के उल्लेख स्तवन आगे दिए जाए गे पर महेन्द्रप्रभसूरि की अष्टोत्तरी तीर्थमाला की तेरहवी शती की सटीक रचना के अनुसार यहां वहुत वडे धनाढयो का निवास स्थान था यत —

'नव नवइ लक्ख धणवइ अलद्धवासे सुवण्णगिरि सिहरे।
नाहड निव कालीण थुणि वीर जक्खवसहीए॥'

अर्थात् ९९ लाख की सम्पत्ति वाले सेठो को भी जहा रहने का स्थान नहीं मिलता था। अर्थात् जहां करोडपति ही रहते थे ऐसे सुवर्णगिरि शिखर पर

ज्ञात होता है कि जावालिपुर के सुवर्णगिरि पर पार्श्वनाथ चैत्य की भमती मे अष्टापद की देहरी मे खत्तक द्वय कराये थे ।

जालोर नगर के मध्य भाग मे 'तोपखाना' नाम से प्रसिद्ध इमारत है जिसमे प्रवेश करते ही बावन जिनालय वाले विशाल मन्दिर का आभास होता है । उसके श्वेत पाषाण की देहरिया, तोरणीवाले पत्थर और शिलालेख युक्त स्तम्भ, मेहराब, देहरियां और दीवालो से प्राप्त शिलालेखो से स्पष्ट होता है कि यह इमारत जैन मन्दिरो के पत्थरो से बनी हुई है । डा० भाण्डारकर का मन्तव्य है कि—"यह इमारत कम से कम चार देवालयो की सामग्री से बनायी गई है जिसमे एक तो 'सिन्धुराजेश्वर' नामक हिन्दू मन्दिर और अन्य तीन आदिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर स्वामी के जैन मन्दिर थे, इनमे से पार्श्वनाथ जिनालय तो क़िल्ले पर था ।"

यह पार्श्वनाथ जिनालय निश्चित ही स्वर्णगिरि पर महाराजा कुमारपाल द्वारा निर्मापित 'कुमर विहार' नामक प्रसिद्ध चैत्य था । श्री महावीर स्वामी का मन्दिर 'चन्दन विहार' नाम से प्रसिद्ध था जो नाणकीय गच्छ से सम्बन्धित था । महेन्द्रप्रभसूरि ने 'यक्षवसति' नामक महावीर जिनालय को नाहड नृप के समय का बतलाया है । हमे मन्दिरो के नामो पर विचार करते महाराज 'चन्दन' नामक परमार वाक्पतिराज के उत्तराधिकारी निश्चयरूप से था एव 'यक्ष वसति' नाम देने के कारण पर विचार करने पर सहसा 'यक्षदत्तगणि' का नाम स्मरण होता है । उद्योतनाचार्य ने लिखा है कि "उनकी पूर्व परम्परा मे पाच पीढी पहले शिवचन्द्रगणि जिनवन्दनार्थ भ्रमण करते हुए श्री भिन्नमाल नगर मे ठहरे थे । उनके गुणवान क्षमाश्रमण महान् शिष्य यक्षदत्तगणि महान महात्मा तीन लोक मे प्रगट यश वाले हुए" नाहड, यक्षदत्त और चन्दन के समय मे काफी अन्तर है अत महावीर जिनालय अभिन्न मानने मे बाधा है ये दोनो अलग-अलग जिनालय थे नामकरण सकारण हुआ हो तो पता नही, विद्वानो को इस पर प्रकाश डालना चाहिए । यक्षदत्तगणि ने गुजरात और राजस्थान मे अनेक स्थानो को जिन मन्दिरो से सुशोभित किया था । जिनके नाम की स्मृति मे यक्षवसति नाम दिया जाना सभवित है । ऋषभदेव जिनालय को उद्योतनाचार्य ने वीरभद्र कारित बतलाया है यदि वह स्वर्णगिरि स्थित मानें तो इसी मन्दिर के आगे श्रीमाल श्रावक यशोदेव के पुत्र यशोवीर ने मण्डप बनवाया था । उसके द्वारा जिनालय निर्माण नहीं कलापूर्ण दर्शनीय मण्डप स० १२३९ मे निर्माण कराने का ही शिलालेख मे उल्लेख है । यदि जावालिपुर नगर के आदिनाथ मन्दिर के आगे उक्त मण्डप

ज्ञात होता है कि जाबालिपुर के सुवर्णगिरि पर पार्श्वनाथ चैत्य की भमती मे अष्टापद की देहरी मे खत्तक द्वय कराये थे ।

जालोर नगर के मध्य भाग मे 'जूना तोपखाना' नाम से प्रसिद्ध इमारत है जिसमे प्रवेश करते ही बावन जिनालय वाले विशाल मन्दिर का आभास होता है । उसके श्वेत पाषाण की देहरिया, कोरणीवाले पत्थर और शिलालेख युक्त स्तम्भ, मेहराब, देहरियाँ और दीवालो से प्राप्त शिलालेखो से स्पष्ट होता है कि यह इमारत जैन मन्दिरो के पत्थरो से बनी हुई है । डॉ० भाण्डारकर का मन्तव्य है कि—"यह इमारत कम से कम चार देवालयो की सामग्री से बनायी गई है जिसमे एक तो 'सिन्धुराजेश्वर' नामक हिन्दू मन्दिर और अन्य तीन आदिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर स्वामी के जैन मन्दिर थे, इनमे से पार्श्वनाथ जिनालय तो क़िल्ले पर था ।"

यह पार्श्वनाथ जिनालय निश्चित ही स्वर्णगिरि पर महाराजा कुमारपाल द्वारा निर्मापित 'कुमर बिहार' नामक प्रसिद्ध चैत्य था । श्री महावीर स्वामी का मन्दिर 'चन्दन विहार' नाम से प्रसिद्ध था जो नाणकीय गच्छ से सम्बन्धित था । महेन्द्रप्रभसूरि ने 'यक्षवसति' नामक महावीर जिनालय को नाहड नृप के समय का बतलाया है । हमे मन्दिरो के नामो पर विचार करते महाराज 'चन्दन' नामक परमार वाक्पतिराज के उत्तराधिकारी निश्चयरूप से था एव 'यक्ष वसति' नाम देने के कारण पर विचार करने पर सहसा 'यक्षदत्तगणि' का नाम स्मरण होता है । उद्योतनाचार्य ने लिखा है कि "उनकी पूर्व परम्परा मे पाच पीढी पहले शिवचन्द्रगणि जिनवन्दनार्थ भ्रमण करते हुए श्री भिन्नमाल नगर मे ठहरे थे । उनके गुणवान क्षमाश्रमण महान् शिष्य यक्षदत्तगणि महान महात्मा तीन लोक मे प्रगट यश वाले हुए" नाहड, यक्षदत्त और चन्दन के समय मे काफी अन्तर है अत महावीर जिनालय अभिन्न मानने मे बाधा है ये दोनो अलग-अलग जिनालय थे नामकरण सकारण हुआ हो तो पता नही, विद्वानो को इस पर प्रकाश डालना चाहिए । यक्षदत्तगणि ने गुजरात और राजस्थान मे अनेक स्थानो को जिन मन्दिरो से सुशोभित किया था । जिनके नाम की स्मृति मे यक्षवसति नाम दिया जाना सभवित है । ऋषभदेव जिनालय को उद्योतनाचार्य ने वीरभद्र कारित वतलाया है यदि वह स्वर्णगिरि स्थित माने तो इसी मन्दिर के आगे श्रीमाल श्रावक यशोदेव के पुत्र यशोवीर ने मण्डप वनवाया था । उसके द्वारा जिनालय निर्माण नहीं कलापूर्ण दर्शनीय मण्डप स० १२३९ मे निर्माण कराने का ही शिलालेख मे उल्लेख है । यदि जावालिपुर नगर के आदिनाथ मन्दिर के आगे उक्त मण्डप

बनाया हो तो उससे पहले वहा मन्दिर विद्यमान था जिसका सकेत कुवलय-माला की गाथा मे है।

तोपखाने मे स० १२३९, १२६८, १२९४, १३२० और स० १३२३ के अलग-अलग वर्षों मे लिखे हुए शिलालेख आज भी विद्यमान हैं इन सभी शिलालेखो को आगे प्रकाशित किया गया है यहा उनका परिचय उल्लेख किया जा रहा है।

महाराजा समरसिंह के समय मे हुए श्रीमाल वश के सेठ यशोदेव के पुत्र श्रेष्ठि यशोवीर ने जालोर के आदिनाथ मन्दिर का रमणीय मण्डप स० १२३९ के वैशाख सुदि ५ गुरुवार को कराया था। यह मण्डप शिल्पकला का अद्भुत नमूना था जिसे देखने के लिए देश-विदेश के सैकडो प्रेक्षक आते थे। सभा मण्डप के पाट पर उत्कीर्णित लेख मे एतद्विषयक उल्लेख इस प्रकार है—

> "नाना देश समागतै र्नवनवै स्त्री पुस वर्गै मुंहु-
> यस्या हो ! रचनावलोकन परै नो तृप्ति रासाद्यते।
>
> स्मार स्मार मयो यदीय रचना वैचित्र्य स्फूर्जितम्
> तै. स्वस्थान गतैरपि प्रतिदिन सोकत्कण्ठ मावर्ण्यते॥"

स० १२६८ का लेख कुमरविहार का है, इस लेख से विदित होता है कि स० १२२१ मे महाराजा कुमारपाल ने गढ पर श्री पार्श्वनाथ भगवान का मन्दिर निर्माण कराया था और सद् विधि प्रवर्त्तनाथ वादि देवसूरि के पक्ष को समर्पित कर दिया। स० १२४२ मे चौहान नरेश्वर समरसिह के आदेश से भा० पासु के पुत्र भा० यशोवीर ने उद्धार कराया। स० १२५६ ज्येष्ठ सुदि ११ को श्रीदेवाचार्य के शिष्य पूर्णदेवाचार्य ने राजकुल की आज्ञा से पार्श्व जिनालय के तोरणादि की प्रतिष्ठा व मूल शिखर पर स्वर्णमय ध्वजादण्ड प्रतिष्ठा और ध्वजारोपण किया। स० १२६८ मे नव निर्मित प्रेक्षा-मण्डप मे श्री पूर्णदेवाचार्य के शिष्य रामचन्द्राचार्य ने स्वर्णमय कलशो को प्रतिष्ठित कर चढाये।

इस लेख मे निर्दिष्ट श्री रामचन्द्रसूरि ने सस्कृत मे ७ द्वात्रिंशिकाए रची हैं। इस मन्दिर की भव्यता विशालता और महत्ता स्पष्ट है। यह बावन जिनालय था जिसमे पार्श्वनाथ भगवान की फणयुक्त प्रतिमा विराजमान थी। स० १२९६ के एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि नागपुरीय लाहड ने इस मन्दिर की भमती मे एक देहरी कराके श्री आदिनाथ भगवान की प्रतिमा प्रतिष्ठा कराई थी। इसी लेख मे उसी के वशज देवचन्द्र श्रेष्ठी के अष्टापद मन्दिर मे दो गवाक्ष बनवाने का उल्लेख है।

स० १२९४ के लेख मे श्रीमालीय विजा और देवड द्वारा अपने पिता के श्रेयार्थ महावीर जिनालय मे करोंद ? कराने का उल्लेख है। स० १३२० और १३२३ के अभिलेखो से मालूम होता है कि चदनविहार नाणकीय गच्छ से सम्बन्धित था, प्रथम लेख मे इस महावीर जिनालय मे आसोज अष्टाह्निका के लिए द्रव्यदान करने का और दूसरे मे महाराजा चाचिगदेव और महामात्य यक्षदेव के समय मे तेलहरा गोत्रीय मह० नरपति ने धनेश्वरसूरि को द्रव्य ५० द्रम्म मासिक पूजा के लिए दिये ताकि इस द्रव्य के व्याज से व्यवस्था की जाय।

स० १३५३ का अभिलेख महाराउल सामर्तसिह और कान्हडदेव के समय का है जिसमे सोनी गोत्रीय श्रावक परिवार द्वारा स्वर्णगिरि के पार्श्वनाथ जिनालय को एक हाट प्रदान करने का उल्लेख है जिसके भाडे की आय से पचमी के दिन प्रतिबर्ष विशेष पूजा कराई जाने का निर्देश है।

स्वर्णगिरि-पहाड पर और भी जिनालय थे जिनका उल्लेख स्तोत्रो एव युगप्रधानाचार्य गुर्वावली आदि मे पाया जाता है। एक सस्कृत स्तोत्र (जैन स्तोत्र सदोह भाग-२ पृ-१८०) मे कुम्कुमरोल नामक पार्श्वनाथ जिनालय का उल्लास है। कवि नर्गषि ने जालोर के पच जिनालय चैत्य परिपाटी स्तवन मे कु कुमरोल पार्श्वनाथ जिनालय पाँचवाँ लिखते हैं जिसमे सप्तफणवाली प्रतिमा थी, वे स्वर्णगिरि के किसी मन्दिर का उल्लेख नही करते।

जालोर शहर के बाहर सडेलाव नामक विशाल तालाब है जिसके किनारे चामुण्डा माता का मन्दिर है, इसके पार्श्ववर्त्ती एक कुटी मे एक मूर्त्ति है जिसे लोग चौसठ जोगणी की मूर्ति कहते हैं। वस्तुत यह मूर्ति कायोत्सर्ग स्थित जिन प्रतिमा ही है जिसके अग प्रत्यग घिसकर जोगणी जैसा बना दिया है जो बडे दुख की बात है। इस पर उत्कीर्णित अभिलेख स ११७५ का है जिसमे जावालिपुर के चैत्य मे सामर्तसिह श्रावक के परिवार द्वारा जावालिपुर के चैत्य मे श्री सुविधिनाथ देव के खत्तक पर द्वार कराने का उल्लेख है।

अब युगप्रधानाचार्य गुर्वावली के आधार से सक्षेप मे बताया जा रहा है कि स० १२६९ से १३४६ तक कितनी प्रतिष्ठाए और ध्वज-दण्ड बिम्ब स्थापनादि हुए और वे सब इतिहास के पन्नो मे नाम शेष हो गए। यवन अत्याचारो और विनाशलीला की दुखद कहानी का ही यह एक अध्याय है।

जावालिपुर मे विधि चैत्यालय का निर्माण होकर उसमे कुलधर मत्री निर्मापित महावीर स्वामी का विधि चैत्य जिसका नाम 'महावीर बोली' मे 'उदय

विहार' लिखा है की स्थापना स० १२६९ मे श्री जिनपतिसूरिजी ने समारोह-पूर्वक की थी, इसी परिवार ने इस महावीर जिनालय मे पार्श्वनाथ देवकुलिका और सेठ लालन ने वासुपूज्य देवगृहिका निर्माणकराई स० १२७८ मे जावालिपुर मे नये देवगृह का प्रारभ हुआ। स० १२८१ मे इसी महावीर जिनालय मे ध्वजा-रोहण स० १२८८ मे स्तूप ध्वज प्रतिष्ठा, स० १२९८ मे स्वर्णदण्ड ध्वजा-रोहण हुआ। स० १३१० मे इसी महावीर विधिचैत्य मे चतुर्विंशति जिनालय सप्तति शतजिन, समेतशिखर, नन्दीश्वरद्वीप, मातृपट, महावीर स्वामी (उज्जैन के लिए), चन्द्रप्रभ, शान्तिनाथ, सुधर्मा स्वामी, जिनदत्तसूरि, सीमधर स्वामी, युगमधरादि नाना प्रतिमाए प्रतिष्ठित हुई। स० १३१७ में २४ देहरियोपर स्वर्ण कलश-ध्वज दण्ड चढाये। स० १३२५ वैशाख सुदि १४ को इसी मन्दिर मे २४ जिनबिंव, सीमधर युगमधर, वाहु सुवाहु जिन बिम्बो की प्रतिष्ठा हुई। म० १३२८ वै० सु० १४ को क्षेमसिह कारित चन्द्रप्रभ महाविंव, मह० पूर्णसिह कारित ऋषभदेव महावीर स्वामी प्रतिमाओ का प्रतिष्ठा महोत्सव हुआ। स० १३३१ मे सा० क्षेमसिह ने श्री जिनेश्वरसूरि स्तूप का निर्माण कराया। म० १३३२ ज्येष्ठ वदि को क्षेमसिह कारित प्रतिष्ठा महोत्सव हुआ जिसमे नमि-विनमि सेवित आदीश्वर, धनदयक्ष व स्वर्णगिरि पर चन्द्रप्रभ स्वामी व वैजयन्ती की प्रतिष्ठा कराई, दिल्ली आदि के श्रावको ने भी अनेक प्रतिमाए प्रतिष्ठित करवाई। ज्येष्ठ वदि ६ को चन्द्रप्रभ स्वामी के ध्वजारोहण जेठ वदि ९ को जिनेश्वरसूरि स्तूप में प्रतिमा की प्रतिष्ठा हुई। स० १३४२ ज्येष्ठ वदि ९ को क्षेमसिह कारित २७ अगुल की रत्नमय अजितनाथ प्रतिमा, ऋषभदेव, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ प्रतिभा तथा देदा मत्री कारित युगादिदेव, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ विम्वो की एव छाहड कारित शान्तिनाथ स्वामी के महत्तम विम्ब की, वैद्यदेहड कारित अष्टापद ध्वज-दण्ड की प्रतिष्ठा हुई। स० १३४६ माघ वदि १ को सा० क्षेमसिह भा० वाहड कारित चन्द्रप्रभ जिनालय के पास आदिनाथ नेमिनाथ विम्वो को मण्डप के खत्तक मे समेतशिखर के २० विम्वो का स्थापना महोत्सव हुआ। वैशाख सुदि ७ को जिनप्रवोधसूरि मूर्त्ति को स्तूप मे स्थापित की, ध्वजादड भी साह अभयचन्द ने चढाए।

इससे जावालिपुर में महावीर स्वामी के विधि चैत्य की विशालता और अन्य मन्दिर भी स्थापित हुए जिनका आभास मिलता है।

स्वर्णगिरि पर भी स० १३१३ मे वाहित्रिक उद्धरण प्रतिष्ठापित शान्तिनाथ प्रतिमा को महाप्रासाद मे स्थापित की। वै० व० १ को पद्म, मूलिग द्वारा द्वितीय देवगृह मे अजितनाथ स्वामी की प्रतिष्ठा हुई। स० १३१४ मे स्वर्णगिरि के

शान्तिनाथ प्रासाद पर इन्होने ही स्वर्ण कलश दण्ड ध्वजादि चढाए। स० १३२५ मे वै० सु० १४ को प्रतिष्ठित किए हुए २४ जिन बिम्बो की स्थापना जेठ वदि ४ को स्वर्णगिरि के शान्तिनाथ विधि चैत्य मे हुई। इसी प्रकार स० १३२८ मे सा० क्षेमसिंह ने जिस चद्रप्रभ महाबिम्ब की प्रतिष्ठा करवाई थी स० १३३० वैशाख बदि ८ को स्वर्णगिरि पर उसे शिखर मे स्थापित किया। सा० विमलचद्र के पुत्रो द्वारा स्वर्णगिरि शिखरालकार चन्द्रप्रभ, आदिनाथ, नेमिनाथ प्रसाद बनवाने का उल्लेख अनेकान्त जयपताका की प्रशस्ति मे है। इससे ज्ञात होता है कि स्वर्णगिरि पर भी शान्तिनाथ विधि चैत्य था जिसमे २४ भगवान की देहरिया एव अन्य भी देहरिया और शिखर आदि मे जिनबिंब विराजमान हुए थे। इन सब अवतरणो से जावालिपुर और स्वर्णगिरि के समृद्ध अतीत की अच्छी झाकी मिल जाती है। म्लेच्छो द्वारा भग होने के पश्चात् भी जालोर मे अनेक उत्सव महोत्सव होते रहे हैं। स० १३८३ में दादा साहब श्री जिनकुशल सूरि जी ने महातीर्थ राजगृह के लिए अनेक पाषाण व धातुमय जिन बिम्बो की प्रतिष्ठा भी यही की थी।

हिन्दूकाल में सभी तीर्थ सातिशय-चमत्कारपूर्ण थे। मुसलमानो ने गोमासादि से अपवित्र करके उनका देवाधिष्ठित्व नष्टकर दिया। जालोर के महावीर जिनालय का आश्चर्यकारी चमत्कार लिखते हुए तेरहवी शती के श्री महेन्द्रप्रभसूरि ने टीका मे खुलासा किया है कि रथयात्रा के समय सुसज्जित रथ मे विराजित वीर प्रभु की मूर्ति स्वयमेव नगर मे सचरण करती है बिना बजाये पटह रथयात्रा के समय नगर में गुजायमान होते हैं।

प्राचीन तीर्थमाला सग्रह भाग मे प्रकाशित प० महिमाकृत चैत्य परिपाटी मे जालोर गढ के ३ उत्तुग देहरो मे प्रतिमाओ की सख्या २०४१ और स्वर्णगिरि पर तीन प्रासादो मे ८५ प्रतिमाए लिखी हैं।

स० १६५१ मे नर्गषि गणि ने 'जालुर नगर पच जिनालय चैत्य परिपाटी' नामक तीर्थमाला मे यहा की चार पौषधशाला और पाच जिनालय एव तत्रस्थित प्रतिमाओ की सख्या लिखी है किन्तु सुवर्णगिरि के चैत्यो का कोई उल्लेख नही किया है अत महातीर्थ-तीर्थ के रूप मे प्रसिद्ध स्वर्णगिरि की गरिमा लुप्त हो गई मालूम देती है समयसुन्दर जी यहाँ विचरे हैं, फिर भी तीर्थमाला स्तवन मे स्वर्णगिरि गढ के चैत्य वीरान दशा में रहे हो और नर्गषिजी की दृष्टि में न आए हो, उन्होने नगर के १ महावीर स्वामी, २ नेमिनाथ ३ शान्तिनाथ ४ आदिनाथ

५ पार्श्वनाथ ये पाच चैत्य विद्यमान थे, लिखा है। नर्गषि ने महावीर जिनालय में ९५ प्रतिमाए, नेमिनाथ जिनालय मे ४१३, शान्तिनाथजी में १२५, आदिनाथ जी में ७१ प्रतिमाए होने का उल्लेख किया है, पाचवें मदिर पार्श्वनाथजी की प्रतिमा सख्या का उल्लेख नही है।

मुगलो के शासन काल मे जहागीर वादशाह के समय मारवाड के राठौड वशीय महाराज गर्जसिह और उनके मत्री मुहणोत जयमलजी हुए है उन्होने स० १६८१ में सुवर्णगिरि दुर्गपर एक जिनालय वनवा कर तीन प्रतिमाए स्थापित की और वहा के प्राय सभी मन्दिरो का जीर्णोद्धार और प्रतिष्ठाएँ कराई थी।

मत्री जयमलजी की पत्निया सरूपदे और सोभागदेने कितनी ही मूर्त्तियाँ वनवाकर प्रतिष्ठित कराई जो आज भी विद्यमान है। सरूप दे के पुत्र नैणसी अन्य सभी पुत्रो से अधिक नामाकित हुए। जोधपुर के तत्कालीन राजा जसवतसिह (प्रथम) ने उन्हे अपना दीवान वनाया। अपने मत्रीत्व काल में इन्होंने अत्यन्त कुशलता का परिचय दिया। मारवाड की सर्वाधिक प्रसिद्ध ख्यात-इतिहास 'नैणसी री ख्यात" नाम से लिखा जो केवल मारवाड ही नही किन्तु मेवाड तथा राजपूताने के अन्य सभी राज्यो के लिए भी अत्यन्त उपयोगी और महत्वपूर्ण इतिहास ग्रन्थ है।

---

१ जावालिपुर मे प्रतिहार सम्राट वत्सराज ने राज्य करते हुए गौड, वंगाल, मालव आदि पर विजय प्राप्त कर उत्तरापथ मे महान् राज्य स्थापित करने मे प्रयत्नशील था। उसने उत्तर प्रदेश के कन्नौज मे अपनी राजधानी स्थापित की। इत पूर्व जावालिपुर राजधानी थी इस प्रकार जालोर को न केवल मारवाड की ही अपितु तत्कालीन वहुत वडे साम्राज्य की राजधानी होने का भी गौरव प्राप्त हुआ था। शक सं० ७०५ (वि० स० ८४०) मे जैन हरिवश पुराण के कर्त्ता दिगम्बराचार्य जिनसेन ने पश्चिम मे राज्य करने वाले सम्राट वत्सराज का उल्लेख किया है, यत.—

शाकेष्वब्दशतेषु । सप्तसु विशं पचोत्तरषूत्तरा
पातीन्द्रायुध नाम्नि कृष्ण नृपजे श्री वल्लभे दक्षिणाम्
पूर्वा श्रीमदवन्तिभूभृति नृपे वत्साधिराजेऽपरा
सौर्या (रा) णामधि मण्डले (ल) जययुते वीरे वराहेऽवति

अर्थात्-शक स० ७०५ मे जब इंद्रायुध नामक राजा उत्तर दिशा मे राज्य करता था, श्री कृष्णराज का पुत्र श्री वल्लभ दक्षिण दिशा मे राज्य करता था, पूर्व मे अवन्तिराज, पश्चिम मे वत्सराज और सौर्य मण्डल मे जयवराह राज्य करता था।

इसी वत्सराज के पुत्र नागभट ने सदा के लिए जावालिपुर से हटाकर राजधानी कन्नौज मे स्थापित की थी। नाहड शब्द नागभट का ही पर्याय है। अत इसी नाहड के समय महावीर जिनालय का निर्माण न हुआ हो ? वत्सराज के समय उद्योतनसूरि ने ऋषभ जिनालय का ही उल्लेख किया है, विद्वान लोग विचार करें। यह नागभट प्रथम था और दूसरा नागभट नागावलोक आम राजा था जिसे बप्पभट्टिसूरि ने प्रतिबोध दिया।

स्वर्णगिरि के जिनालय

१ भगवान महावीर स्वामी का मन्दिर—तीर्थ धाम का यह मुख्य मन्दिर विशाल, भव्य और रमणीक है मूल गर्भगृह, गूढमण्डप, नौचौकी, विशाल सभा मण्डप, शृ गार चौकी और उन्नत शिखर युक्त भव्य रचना वाला है। इसमे मूल नायक भगवान की २ हाथ ऊ ची श्वेत वर्णी प्रतिमा है। जिस पर स० १६८१ मे श्री विजयदेवसूरिजी के आज्ञानुवर्त्ती श्री जयसागरगणि द्वारा प्रतिष्ठा कराने का लेख है। मत्री जयमल मुहणोत ने इसका जीर्णोद्धार करवाया था। उससे पहले जो मूलनायक भगवान की प्राचीन प्रतिमा थी वह वाह्य मण्डप के गवाक्ष मे रखी हुई है। प्राचीन 'यक्षवसति प्रासाद' इसे ही माना जाता है क्योकि इसमे गूढ मण्डप, प्रेक्षा मण्डप, गवाक्ष आदि के भाग जीर्णोद्धार के समय के लगते है किन्तु पाषाण और उनकी कोरणी, मूल शिखर का भाग तो प्राचीन अर्थात् १३वी शती के पश्चात् का नही प्रतीत होता। महाराजा कुमारपाल ने जब कुमार विहार का निर्माण कराया उसी समय इस मन्दिर का भी जीर्णोद्धार कराया था। अन्तिम उद्धार श्री विजयराजेन्द्रसूरिजी महाराज के उपदेश से सम्पन्न हुआ।

२ श्री आदिनाथजी का मन्दिर—स्वर्णगिरि के उच्च शिखर पर यह चौमुखजी का द्वितल जिनालय है। इसमे मूलनायक श्री शान्तिनाथ और श्री नेमिनाथ भगवान हैं। इसकी रचना सुमेरु शिखर की भांति है और अष्टापदावतार नाम से पुकारा जाता है। कुवलयमाला की प्रशस्ति मे जिस अष्टापद मन्दिर का सूचन है वह यही मन्दिर होना चाहिए। मुसलमानो के क्रूर हाथो द्वारा क्षतिग्रस्त होने पर भी मूल गभारे की कोरणी तेरहवी शती के वाद की नही लगती। जीर्णोद्धार के समय 'चउ अठ दस दोय' के वदले दुमजिले के चौमुख भी वना दिए मालूम देते हैं। ऊपर और नीचे की मजिल मे चतुर्दिग प्रभु प्रतिमाए विराजमान है जो अधिकाश प्राचीन हैं। प्रवेशद्वार के दाहिनी ओर एव मूलनायक के वाम पार्श्व मे एक सर्वांग सुन्दर प्रतिमा विराजमान है। श्री कु थुनाथ भगवान की चमत्कारिक प्रतिमा अलग देहरी मे विराजित है। मुस्लिम आक्रान्ताओ द्वारा क्षतिग्रस्त मन्दिरो को जीर्णोद्धारित करने का श्रेय स० १६८३ के लगभग मुहणोत जयमल को है।

इस मन्दिर मे स० १९३२ मे सरकारी तोपखाना-शस्त्रास्त्र रखे हुए थे, जो श्री विजयराजेन्द्रसूरिजी महाराज के सत्प्रयत्नो से हटाये जाकर जैन सघ के अधिकार मे जिनालय आया और जीर्णोद्धार भी उन्हो के उपदेशो से सम्पन्न हुआ।

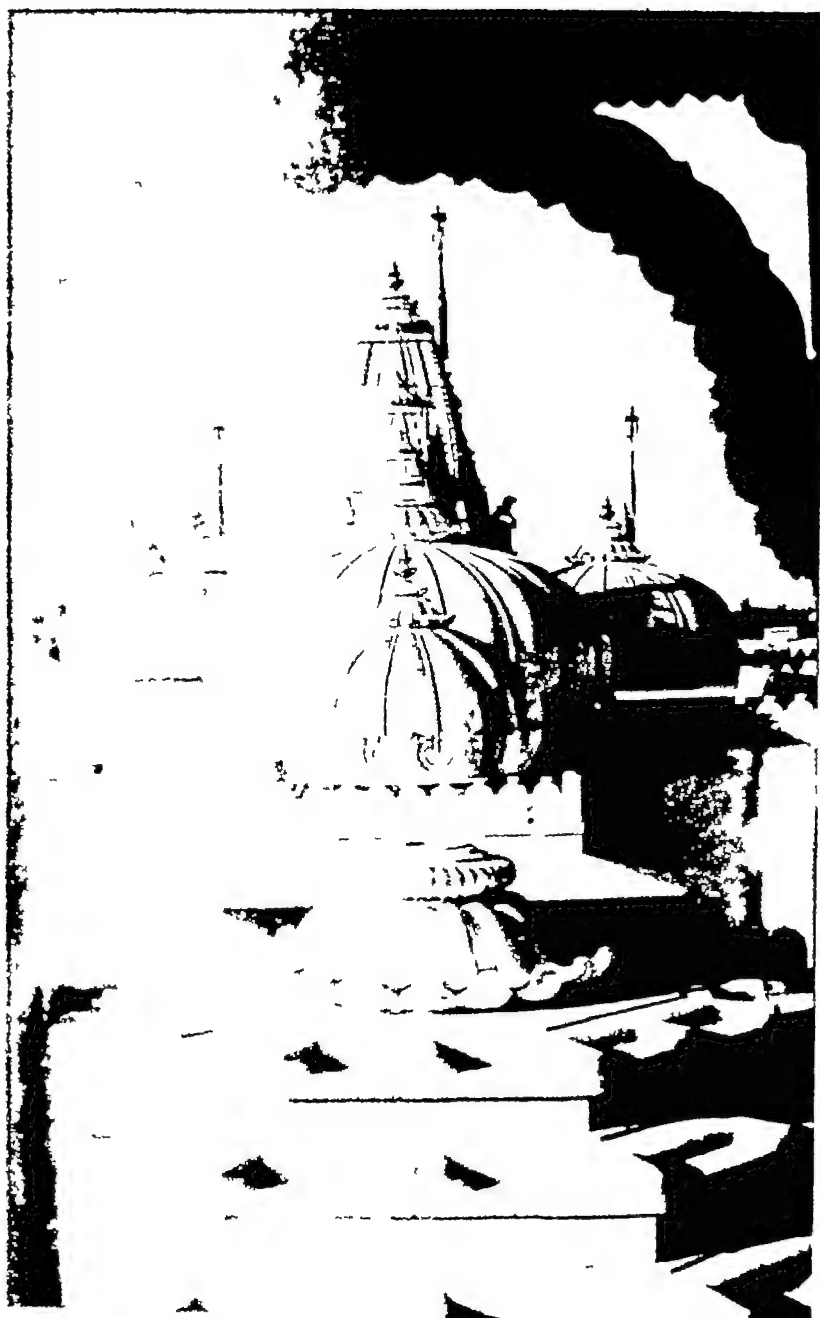
३. श्री पार्श्वनाथ भगवान का मन्दिर—कुछ दूरी पर स्थित मन्दिर छोटा सा किन्तु रमणीक है। परमार्हत् चालुक्य नरेश कुमारपाल द्वारा निर्मापित 'कुमर विहार' तो विशाल बावन जिनालय था। उसकी भमती मे स० १२९६ में गवाक्ष बनवाकर प्रतिमाए विराजमान की गई थी। आगे बताया जा चुका है कि तोपखाने में स्थित शिलालेख के अनुसार स० १२४२ में तत्कालीन देशाधिपति समरसिंह की आज्ञा से भा० यासू के पुत्र यशोवीर ने कराया था। तथा स० १२५६ पूर्णदेवाचार्य द्वारा तोरण व स्वर्णमय दण्ड कलश ध्वजारोपणादि प्रतिष्ठित करने व अन्य सभी व्यवस्था का उल्लेख आगे किया जाचुका है। आज का यह मन्दिर तो छोटा सा है और प्राचीन कलाकृति भी सुरक्षित नही है फिर भी इसके शिखर की शैली बारहवी तेरहवी शती के शिखरो के समकक्ष है। सभवत प्राचीन कुमर विहार के सम्पूर्ण ध्वस्त होने पर उसके बदले यह नव्य मन्दिर बनाया गया हो जिसे कुमार विहार का जीर्णोद्धार रूप माना जा सकता है। इस मन्दिर का जीर्णोद्धार भी श्री विजयराजेन्द्रसूरिजी के सदुपदेव से हुआ है।

४-५. शान्तिनाथ व नेमिनाथ के जिनालय—श्री स्वर्णगिरि तीर्थ को पचतीर्थी रूप में प्रतिष्ठित करने के हेतु इन दोनो छोटे-छोटे जिनालयो को पास-पास मे निर्मित कराया गया। पूज्य आचार्य श्री विजयभूपेन्द्रसूरिजी महाराज के उपदेशो से जैन सघ ने स० १९८८ में निर्माण करवा कर प्रतिष्ठा करवाई।

ये दोनो देवालय शिल्पकला के उदाहरण है और इसी चौक में एक ओर गुरुमन्दिर का नव्य निर्माण हुआ है।



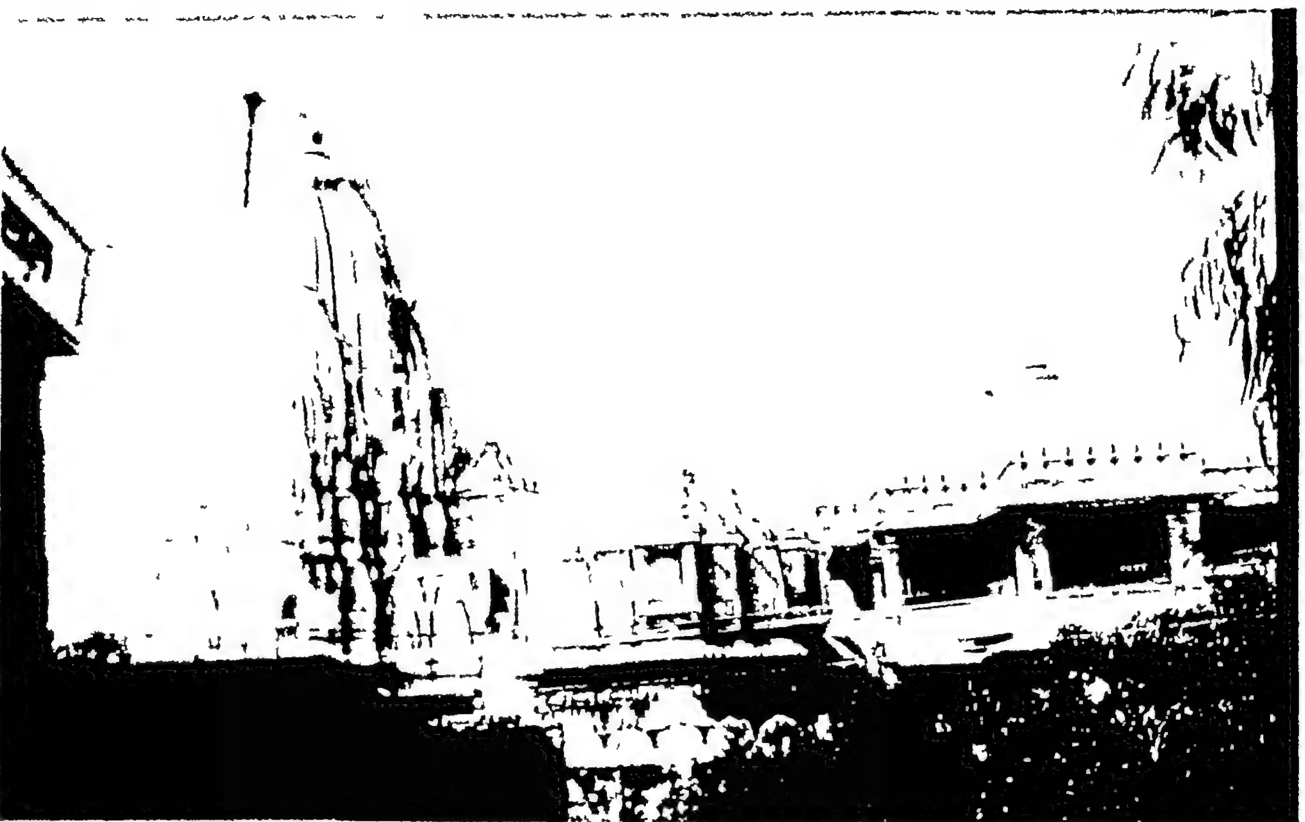
श्री महावीरस्वामी - तपावास, जालोर



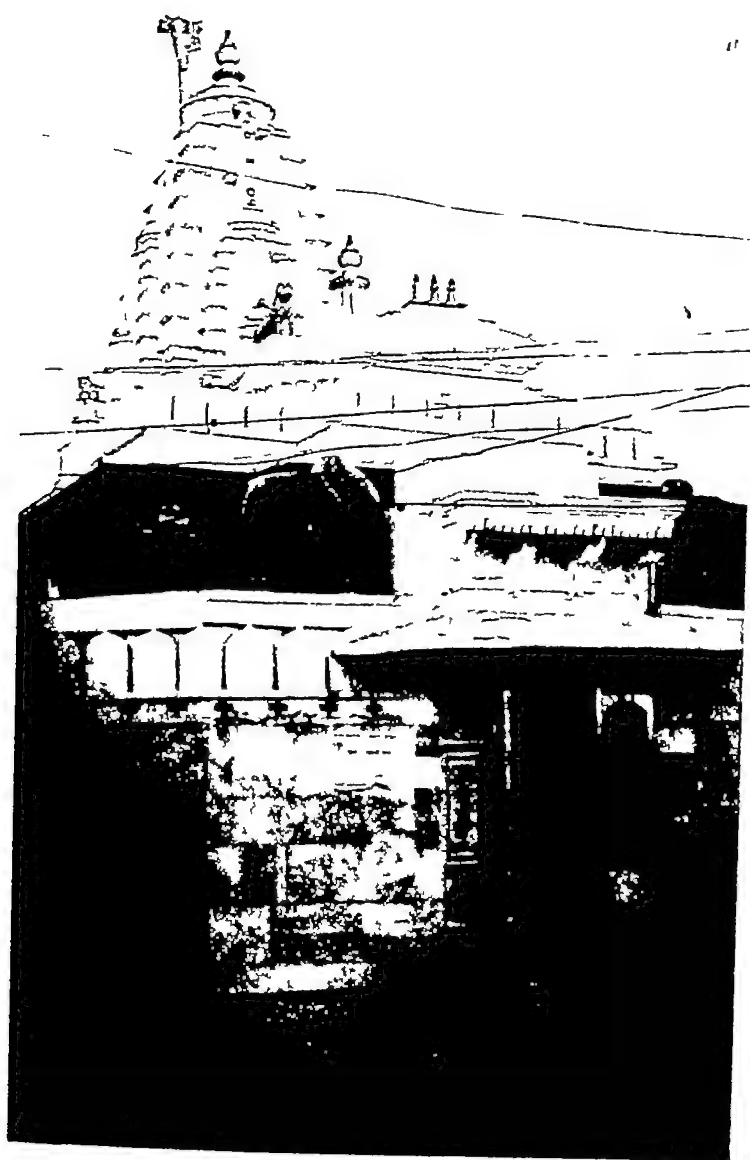
श्री नन्दीश्वर तीर्थ, जालोर



श्री गौड़ी पार्श्वनाथ मन्दिर, जालोर



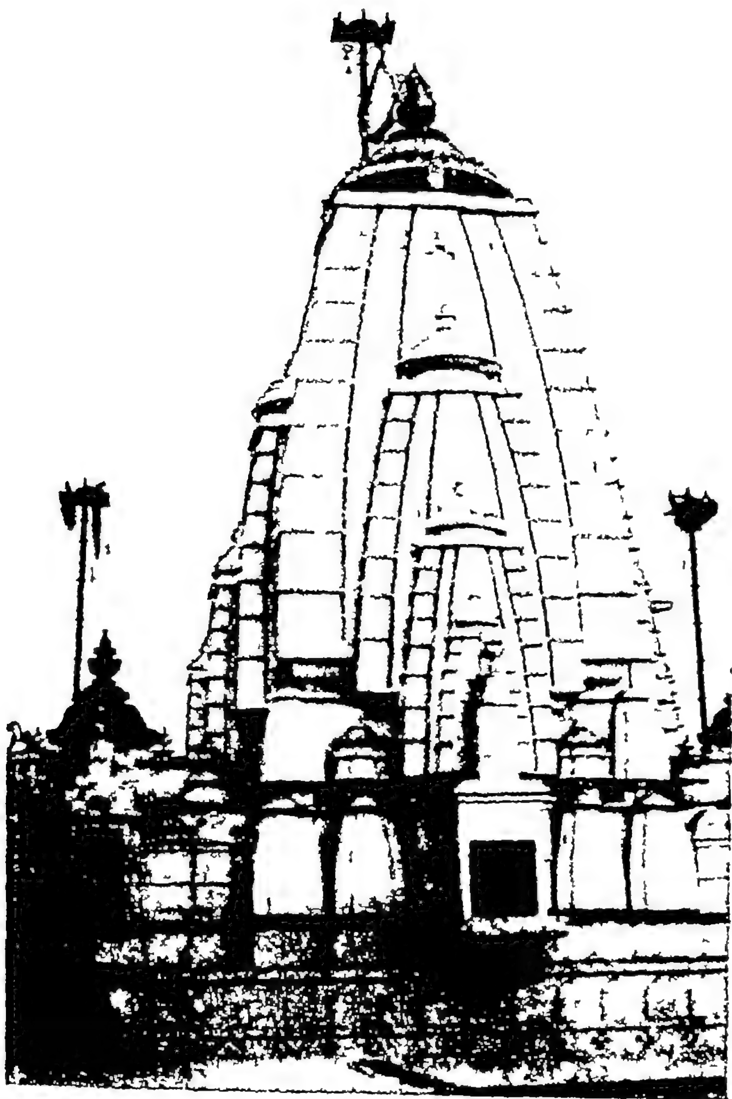
श्री स्वर्णगिरि दुर्ग के मन्दिर का बाहरी दृश्य



श्री वासुपुज्यजी जैन मन्दिर, जालोर

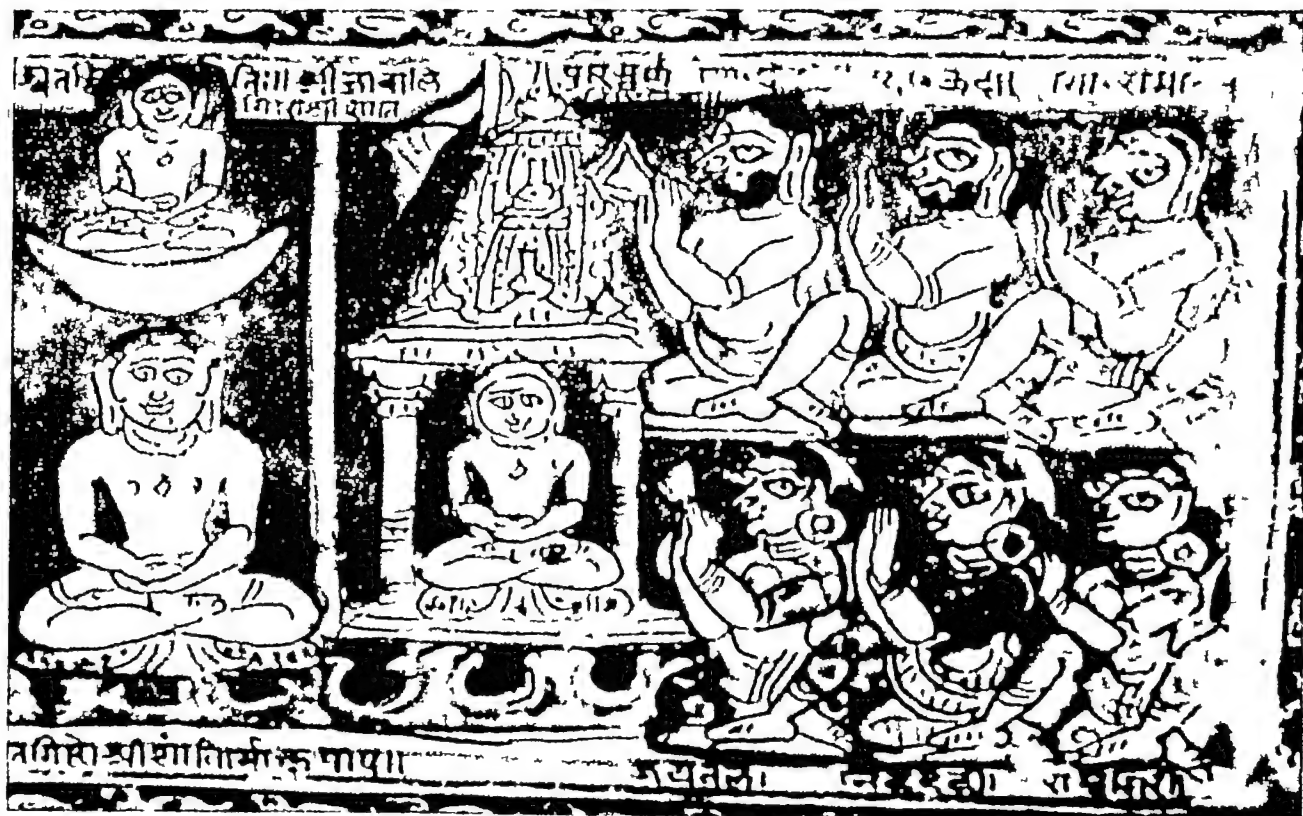


श्री महावीर स्वामी मन्दिर - स्वर्णगिरि, जालोर



श्री खरतरा पार्श्वनाथ मन्दिर का वाहरी दृश्य, जालोर

शान्तिनाथ चरित्र चित्र - पट्टिका



शान्तिनाथ निर्वाण सम्मेत शिखर	श्री जावालिपुरे स्वर्णगिरी	गो देदउ	गो. ऊदा	गो रामदेव
ऊपर सिद्धशिला शास्वत स्थिति	शाति विधि चैत्य	जयतल	नेहड़हि	राम्वसिरी

जालोर के जिनालयादि

जालोर नगर मे आज ४ उपाश्रय, दो पोसालें, तीन धर्मशालाए, ज्ञान-भण्डार, पुस्तकालय-वाचनालय आदि हैं। तीन थुई वालो की धर्मशाला सबसे वडी, पक्की और दुमजिली है। इसके एक कमरे मे ज्ञान भडार है जिसमे मुद्रित व हस्त लिखित ग्रन्थो का सग्रह है। यहा की केशरविजयलायब्रेरी मे भी अच्छे-अच्छे ग्रन्थो का सग्रह है। यतीन्द्र-विहार-दिग्दर्शन के अनुसार ५० वर्ष पूर्व यहा दशा वीसा ओसवालो के ७५५ और पोरवाडो के १०० घर थे जिनमे त्रिस्तुतिक सम्प्रदाय के १३५ घर, चतुर्थ स्तुतिको के ३०० घर, स्थानक-वासियो के ३२५ और दादूपथी-रामस्नेही धर्म पालन करने वाले ५ घर थे।

शहर के महाजनी मुहल्लो मे सौधशिखरी ८ गृह-मन्दिर १ सूरज पोल के वाहर शिखरवद्ध १ यो दश मन्दिर हैं। ११वा श्री गौडी पार्श्वनाथजी का मन्दिर और वारहवा श्री वर्द्धमान विद्यालय मे नन्दीश्वर द्वीप रचना वाला भव्य मन्दिर नव-निर्मित है।

मूल नायक	पाषाण	सर्वधातु	मुहल्लो का नाम	चरणपादुका
१ पार्श्वनाथ	४	०	काकरियावास	१
२ वासुपूज्य	३	२	फोलावास	०
३ पार्श्वनाथ	२९	०	खरतरवास	०
४. जीरावला पार्श्वनाथ	१	०	पोसाल मे	१
५ मुनिसुव्रत	९	०	खानपुरावास	०
६ महावीर	४९	४	तपावास	१
७ नेमिनाथ	२४	७	,,	०
८ शान्तिनाथ	१६	१	,,	२
९ आदिनाथ	५	९	,,	१
१०. ऋषभदेव	५	५	सूरज पोल	१
११ गौडी पार्श्वनाथ				
१२ वर्द्धमान विद्यालय				

श्री विजयनेमिसूरि ज्ञानभडार अहमदाबाद मे 'श्रावक धर्म प्रकरण' की सचित्र ताडपत्रीय प्रति है जिसकी रचना स० १३१३ दशहरे के दिन पालनपुर मे श्री जिनेश्वरसूरि जी महाराज ने की थी। उस पर आचार्य श्री के शिष्य लक्ष्मीतिलकोपाध्याय ने स० १३१७ मा० शु० १४ को जावालिपुर (जालोर) मे पन्द्रह हजार श्लोक परिमित वृहद्वृत्ति रची है जो अद्यावधि अप्रकाशित है। प्रस्तुत ग्रन्थ की काष्ठपट्टिकाओ पर अति सुन्दर चित्र बने हुए है। जो उसी प्रति के हैं और लगभग उसी अरसे मे चित्रित हुए हैं। जिस दिन यह टीका पूर्ण हुई उसी दिन जालोर के श्री महावीर स्वामी (चौबीस जिनदेवगृहिका युक्त) जिनालय पर स्वर्ण कलश दण्ड ध्वजारोपण सर्व समुदाय ने कराया था। उससे दो दिन पूर्व लक्ष्मीतिलक गणि को उपाध्याय पद और पद्माकर मुनि की दीक्षा हुई थी। युग प्रधानाचार्य गुर्वावली मे उपाध्यायजी की दीक्षा स० १२८८ मे हुई लिखी है जिससे उनका जन्म स्थान भी जालोर सभवित है।

प्रस्तुत 'श्रावक धर्म प्रकरण वृत्ति' की प्रति लिखवाने वाले श्रावको के चित्र इसमे होने से तथा जिनालय का चित्र होने से यह प्रति बडी महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि प्रशस्ति वाले अन्तिम पत्र नष्ट हो गये किन्तु बचे खुचे टुकडो से जावालिपुर के द्वितीय जिनराजाष्टाह्निका, वीरभवने स्वश्रेयसे अष्टान्हिका चैत्र मासि चतुर्थिका तथा स्वर्णगिरि पर स्वजननी श्रेयोर्थं अष्टान्हिका चैत्र मासि तृतीयिकाँ के उल्लेख के सिवा और कुछ नहीं मिलता।

शान्तिनाथ चरित्र के चित्रोवाली प्रस्तुत ताडपत्रीय प्रति की काष्ठपट्टिका द्वय मे दूसरी काष्ठपट्टिका के पृष्ठ भाग मे जिनालय के पास तीन पुरुषो और तीन स्त्रियो की आकृतिया चित्रित हैं जिनका परिचय इस प्रकार लिखा है—"श्री जवालिपुरे स्वर्णगिरौ श्री शान्तेर्विधि चैत्ये ॥ गो देदउ ॥ गो ऊदा गो० रामदेव" इनके नीचे कक्ष मे तीन श्राविकाए चैत्यवदन कर रही है। उनके नाम "जयतल। नेहडही। राम्वसिरी।" ये तीनो भाइयो की धर्म-पत्निया होगी।

गणिवर्य श्री शीलचन्द्रविजयजी ने चित्र के प्रस्तुत अन्तिम विभाग का परिचय इस प्रकार दिया है—काष्ठपट्टिका के अन्तिम खण्ड मे अभी एक सुन्दर दृश्य हम देख सकते हैं। इस अन्तिम दृश्य मे प्रथम एक नक्कासीदार शिखर से विभूपित जिन मन्दिर है। इसके शिखर पर पीले रग का अर्थात् स्वर्णमय ध्वज-दण्ड और कलश प्रतिष्ठित है। जिनमन्दिर मे एक जिनमूर्ति है। यह जिन मन्दिर जावालिपुर (जालोर) के निकटवर्ती जैन तीर्थ भूमि रूप श्री स्वर्णगिरि की पहाडी पर के शान्तिनाथ भगवान के चैत्य की प्रतिकृति है। ऐसा काष्ठपट्टिका पर लिखित उल्लेख पढने

मे समझ सकते है। जिन मन्दिर के नीचे नीले रग के पाषाण खण्ड स्वर्णगिरि के प्रतीक हैं। इस जिनमन्दिर और जिनप्रतिमा के सम्मुख ऊपर तीन पुरुष और नीचे तीन स्त्रिया बैठी हैं। तीन पुरुष वे भाई हैं कि जिन्होंने भगवान शान्तिनाथ के चरित्र का आलेखन वाली इन काष्ठपट्टिकाओ का निर्माण कराया होगा। ऐसा अनुमान है। और नीचे की पक्ति मे बैठी हुई तीन स्त्रिया प्राय इन तीनो भ्राताओ की धर्मपत्निया मालूम देती हैं। तीनो भ्राताओ मे प्रथम दो के दाढी मूँछ है, तीसरे के नही अत वह अभी किशोर-युवक होगा तब ये पट्टिकाए चित्रित हुई होगी।

यह ग्रन्थ पन्यास श्री शीलचन्द्रविजयजी गणि द्वारा सपादित और L D. इन्स्टीच्यूट आफ इण्डोलोजी अहमदाबाद से सचित्र प्रकाशित हुआ है।

जालोर में विभिन्न गच्छ और शासन प्रभावनाएं

खरतर गच्छ

ग्यारहवी शताब्दी मे चैत्यवासियो का शिथिलाचार चरम सीमा पर पहुच गया था। राज्याश्रय प्राप्त गुजरात तो उनका अमेद्य दुर्ग था, जहा सुविहित साधुओ का प्रवेश भी अशक्य था। जैन धर्म की अस्तित्व रक्षा के लिए सुविहित साध्वाचार और विधि-मार्ग की प्रतिष्ठा को नितान्त आवश्यक समझ कर दिल्ली की ओर से श्री वर्द्धमानसूरिजी अपने जिनेश्वरसूरि और बुद्धिसागरसूरि आदि १८ शिष्यो के साथ गुजरात की ओर बढे। उन्होने मार्गवर्त्ती स्वर्णगिरि-जालोर की पावन तीर्थ भूमि को सुविहित मार्ग प्रचार की उर्वरा भूमि ज्ञात कर उस पर ध्यान केन्द्रित किया और पाटन मे दुर्लभराज की सभा मे चैत्यवासियो को पराजित कर उनकी रीढ तोड दी, अब सर्वत्र उन्मुक्त साधुविहार होने लगा। वे लोग गुजरात से विहार कर पुन जालोर आये और यहा चातुर्मास कर के विधि-मार्ग को परिपुष्ट किया। श्री जिनेश्वरसूरि, बुद्धिसागरसूरि, सवेगरगशाला कर्त्ता श्री जिनचन्द्रसूरि आदि यहाँ अनेकश विचरे, चातुर्मास किए, महान् ग्रन्थो का निर्माण किया। उनके शिष्य गण भी यहाँ विचरते रहे। सोमचद्र गणि (श्री जिनदत्तसूरि) यहा अनेकश विचरे थे। उन्हे श्री जिनवल्लभसूरिजी के पट्ट पर आचार्य प्रतिष्ठापित करने का निर्णय भी यही सात आचार्यो ने मिल कर लिया था। क्योकि वे भावी युगप्रधान और सर्वथा योग्य होने के साथ-साथ श्री जिनेश्वरसूरिजी के शिष्य धर्मदेवोपाध्याय के शिष्य थे। वृद्धाचार्य प्रबन्धावली जो युगप्रधानाचार्य गुर्वावली के पृ-९२ मे प्रकाशित है—मे श्री जिनदत्तसूरिजी की पद-स्थापना निर्णयका इस प्रकार उल्लेख हैं—

"जिणवल्लहसूरि पदे अन्ने सत्तायरिया जालउर नगरमि मिलिऊण मत इह कय। समग्ग सघ गच्छ परिवारिया बीय भट्टारग करिस्सामि, जिणवल्लहसूरि पट्टे। तओ दक्खिण देसे देवगिरि नगरे जिणदत्तगणी चउमासी ठियो अत्थि, त सपभावग गीयत्थ पट्ट जुग्ग जाणिऊण सघेहि आहूओ। पट्ट ठवणा दो मुहुत्ता गणिया तओ सघ पत्थवणा वसाओ जिणदत्त गणी चलिओ।

तओ गणी वीय मुहूत्ते जालउर दुग्गे एगारह नयइ गुणहत्तरे वरिसे जिणदत्त-सूरि पट्टे ठविओ मव्व सर्घोहि। वास्तव मे यह पद स्थापना चित्तौड मे हुई थी किन्तु निर्णय जालोर मे हुआ था।

पाठक रघुपत्ति कृत जिनदत्तसूरि छन्द (गा०-३५ स० १८३९ मे रचित) मे आपके द्वारा वोथरा वश प्रतिवोध का उल्लेख —

जालोर नयरे मरी जमाणी, सगर नृप चहुआण ए
तसु पुत्र वोहिथ तेण गुरू पय प्रणमिया गुण जाण ए
जीवारीयै करि जाप जिणदत्त जैन धर्म सभ्रत ए
जिनदत्तसूरीस सदगुरु सेवता सुख सत ए॥१८॥

यह वर्णन वहुत वाद का है, पर श्री जिनदत्तसूरिजी ने अवश्य ही जालोर मे विचरण किया था। श्री पूज्य जी के दफ्तर मे वच्छावत वशावली मे देवडा सोनिगरा गोत्रीय सामतसी के चतुर्थ पुत्र सगर को पुत्र वोहित्थ से वोहिथरा गोत्र होना लिखा है।

श्रीमाल जाति का सोनगिरा गोत्र जालोर से सम्वन्धित और खरतरगच्छ प्रतिवोधित है जिसके वशज माण्डवगढ के सुप्रसिद्ध मण्डन और धनराज आदि विद्वान और धनाढ्य, राजमान्य व्यक्ति थे।

सौभाग्य से युगप्रधानाचार्य गुर्वावली मे जालोर के तिमिराच्छन्न इतिहास पर सम्यक् प्रकाश डालने वाले स्वर्णिम पृष्ठ उपलब्ध हैं जो अत्यन्त विश्वस्त और प्रमाणिक हैं यहां उन प्राचीन प्रमाणो का उल्लेख किया जा रहा है।

श्री जिनपतिसूरि

स० १२६९ में जावालिपुर के विधि चैत्यालय मे मत्रीश्वर कुलधर[1] द्वारा निर्मापित श्री महावीर स्वामी की प्रतिमा को वडे भारी समारोह पूर्वक श्री जिन-पतिसूरि जी ने स्थापित किया। श्री जिनपाल गणि को उपाध्याय पद से अलकृत किया एव प्रवर्त्तिनी धर्मदेवी को महत्तरा पद दिया गया और उसका नाम प्रभावती प्रसिद्ध किया। यही पर महेन्द्र, गुणकीर्त्ति, मानदेव नामक साधु और चन्द्रश्री, केवलश्री साध्वियो को दीक्षा देकर आचार्य प्रवर श्री जिनपतिसूरिजी महाराज विक्रमपुर पधारे।

---

१. प्रशस्ति सग्रह पृ० ४६ मे सूरत स्थित मोहनलालजी महाराज के ज्ञान भण्डार की स० १५४६ लिखित स्वर्णाक्षरी कल्पसूत्र की गा० ४८ की प्रशस्ति प्रकाशित है जिसमे राठौड जयचद्र ने छाजहड वश के उद्धरण कुलधर

स० १२७५ मे ज्येष्ठ सुदी १२ को यही पर भुवनश्री गणिनी, जगमति, मङ्गलश्री—तीन साध्वियाँ और विमलचन्द्रगणि व पद्मदेव गणि की दीक्षा सम्पन्न हुई ।

आदि की वेगड शाखा की प्रशस्ति है जिसमे जालोर मे मत्री कुलधर के द्वारा प्रासाद निर्माण का उल्लेख—

तत्पुत्रोऽथ कुलधर. कुलभार धुरन्धर
प्रौढ प्रताप सयुक्तः शत्रूणा तपनोपमः ॥१३॥

श्री जावालिपुरे भिन्नमाले श्रीवाग्भटे तथा
प्रासादा. कारिता स्तेन निज वित्त व्ययाद्वरा ॥१४॥

पृ० ७ मे श्री शान्तिनाथजी के भण्डार, खभात की अभयतिलकोषाध्याय कृत श्री पच प्रस्थान व्याख्या की प्रशस्ति प्रकाशित हुई है जो श्री लक्ष्मीतिलकोपाध्याय सशोधित है । इसकी अपूर्ण प्रशस्ति मे मानदेव, कुलधर, बहुदेव, यशोवर्द्धन भ्राता और उनके वशजो के दीक्षोत्सवादि के साथ-साथ जावालिपुर के वीर जिनालय मे पार्श्वनाथ भगवान की देवकुलिका निर्माण कराने का उल्लेख इस प्रकार है—

"श्री जावालिपुरेऽत्र देवगृहिका पार्श्वस्य वीरे शितुश्चैत्ये"

इसी वश की एक प्रशस्ति जो श्री अभयतिलकोपाध्याय कृत द्वयाश्रय महाकाव्य वृत्ति पत्र २७३ की है, की निम्न दो गाथाए यहाँ उद्धृत की जाती है जिनमे जावालिपुर सम्वन्धी उल्लेख द्रष्टव्य है—

श्री जावालिपुरे च वीर भवने श्री पार्श्व तीर्थेशितुः
सौव पुण्य महोनु देवगृहक नैर्मल्य शाल्युन्नतम्
य प्राचीकर दुद् ध्वज हिमवता कूट तनूजं निज
स्वर्णाद्या ऽऽत्मजया सह प्रहित मद्वार्द्धोपचारे कृते (?) ॥१६॥

सन्तुष्ठोदर्यसिहराद् प्रहितया नादी निनाद स्पृशा
श्रीकर्यामल कारि धींध इतर. स्वास्नुः स्वएवौकसि
श्री देव्या स्वय मतेया कुल कला द्रव्यजुंता सत्यता
साधुत्व प्रिय वादितादिक गुणैराकृष्टये वोच्चकैः ॥१७॥

श्री चन्द्रतिलकोपाध्याय कृत अभयकुमार चरित्र की मुनिश्री पुण्यविजयजी के सग्रह की प्रति की पुष्पिका (गा० ४८) मे जो कुमारगणि रचित है—मे सेठ

श्री जिनेश्वरसूरि

श्री जिनपतिसूरि जी का स्वगवास हो जाने पर उनके पट्ट पर न० १२७८ मिती माघ सुदि ६ को जावालिपुर मे सारे सघ की सम्मति से श्री महावीर देव भवन मे तीर्थ प्रभावनार्थ आचार्य सर्वदेवसूरि ने जिनपालोपाध्याय जिनहितोपाध्याय आदि सघ के साथ पूज्य श्री की आज्ञानुसार उनके शिष्य श्री वीरप्रभगणि को स्थापित कर श्री जिनेश्वरसूरि नाम से प्रसिद्ध किया।[1] जालोर सघ ने सत्रागार, अमारि घोषणा, गीत गान एव रास रचने व याचको को मनोवाछित दान देते हुए यह उत्सव बडे भारी समारोहपूर्वक मनाया। मिती माघ सुदि ९ को यश कलश गणि, विनयरूचि गणि, बुद्धिसागर गणि, रत्न कीर्त्ति गणि, तिलकप्रभ गणि, रत्नप्रभ गणि और अमरकीर्त्ति गणि नामक ७ साधुओ का दीक्षा समारोह भी जावालिपुर मे हुआ। इसके पश्चात् श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराज

कुलधर बहुदेव यशोवर्द्धन के परिवार के सुकृत्यो का विशद वर्णन है जिसमे निम्नोक्त श्लोक मे जावालिपुर—महावीर चैत्य मे सेठ लालण द्वारा अपनी माता के पुण्यार्थ वासुपूज्य देवगृहिका निर्माण कराने का उल्लेख २०वी गाथा मे। यत

> तत्राभूद् धुरि नागपाल उरुधो पुण्योऽययोऽवी करत्
> सार्द्ध लालण साधुना स्वजननी पुण्याय वीर प्रभो
> चैत्ये द्वादश देव देवगृहिका सौवर्ण कुम्भध्वजा
> श्री जावालिपुरे तथा द्विरकरोत तीर्थेषु यात्रा मुदा ॥२०॥

श्री जिनपतिसूरि जी इसी वश के थे तथा खीवड की पुत्री ने जिनेश्वरसूरि जी से तथा जिनप्रबोधसूरि के आचार्य पद के समय इसी वश के भाई बहिन स्थिरकीर्त्ति और केवलप्रभा ने दीक्षा ली थी।

१ हमारे सम्पादित ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह मे प्रकाशित गुरु गुण षट पद मे—

> बार अठहत्तरइ माह सिय छट्ठि भणिज्जइ
> जिणेसरसूरि पइसरइ सघु सयलु विविह सज्जइ
> सूरिमतु सिरि सव्वएवसूरिहिं जसु दिन्नउ
> जालउरिहिं जिण वीर भुवणि बहु उछव कीनउ
> कसाल ताल झल्लरि पडह वेण वसु रलियामणउ
> सुपइति भट्ट सु महि गहिर जय जय सद्द सुहावणउ ॥७॥

श्रीमालनगर पधार गये। वहाँ कई दीक्षा और प्रतिष्ठादि उत्सव हुए। मिती आषाढ सुदि १० को श्रीमालनगर मे जगद्धर कारित समवसरण की प्रतिष्ठा और शान्तिनाथ स्वामी की स्थापना हुई। उसी दिन जावालिपुर मे देवगृह का प्रारम्भ हुआ।

स० १२७९ मिती माघ सुदि ५ को जालोर मे अर्हद्दत्त गणि, विवेक श्री गणिनी, शीलमाला गणिनी, चन्द्रमाला गणिनी और विनयमाला गणिनी की दीक्षा सम्पन्न हुई।

स० १२८१ मिती वैशाख सुदि ६ को श्री जिनेश्वरसूरिजी के सान्निध्य मे विजयकीर्त्ति, उदयकीर्ति, गुणसागर, परमानन्द और कमलश्री गणिनी की दीक्षा हुई। मिती ज्येष्ठ सुदि ९ को जावालिपुर मे श्री महावीर जिनालय पर ध्वजारोपण हुआ था।

स० १२८८ मिती भाद्रपद शुक्ल १० को स्तूप-ध्वज प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। पौष शुक्ल ११ को शरच्चद्र, कुशलचन्द्र, कल्याणकलश, प्रसन्नचन्द्र, लक्ष्मीतिलक गणि, वीरतिलक, रत्नतिलक नामक साधु और धर्ममति, विनयमति गणिनी, विद्यामति गणिनी और चारित्रमति गणिनी को भागवती दीक्षा दी गई।

इसी ग्रन्थ के खरतर गुरु गुण वर्णन छप्पय मे—

माह छट्ठि जालउरि सुद्ध तहि ठविय जिणेसर
बारह अठहत्तरइ रूप लावन्न मनोहर
जिणपबोहसूरि आसोज पचमि जालउरय भयउ
इकतीस वरसि अनुतर सइ पट्ट तरु इणिपरि लयउ ॥८॥

जिनेश्वरसूरि सप्ततिका मे—

तत्तो सुवण्णगिरि मणहरम्मि सुपइट्ठ लट्ठ विजयमि।
निच्चल सीमा पच्चल अविचल गुरु गिरि विभत्त मि ॥३३॥

अब्भुय भुयवल लच्छीवल्लह वक्कहार राय रेहिल्ले।
तित्थप तित्थ पसत्थे, जावालिपुरे विदेहिव्व ॥३४॥

चाउद्दिसि चउविह सघ चउव्विहामर निकाय परियरिओ।
जिणवइ पडिहत्थो सव्वदेवसूरि सुहम्मिदो ॥३५॥

गय हय रवि (१२७८) वरिसे, माहसुद्ध छट्ठीइ तुह पयमिसेय।
सिरिवीर मदरमि कासी जिणस्सेव ॥३६॥चतुर्भिः फलापकम्॥

म० १२९१ मिती वैशाख सुदि १० को जावालिपुर मे यतिकलश, क्षमाचन्द्र, शीलरत्न, धर्मरत्न, चारित्ररत्न, मेघकुमार गणि, अभयतिलक गणि, श्रीकुमार तथा शीलसुन्दरी गणिनी और चन्दनसुन्दरी की दीक्षा सम्पन्न हुई। मिती ज्येष्ठ वदि २ मूलार्क मे श्री विजयदेवसूरि को आचार्य पद दिया गया।

म० १२९८ वैशाखी एकादशी को जावालिपुर मे मह० कुलचन्द्र ने समुदाय सहित गुणचन्द्र द्वारा स्वर्णमय दण्ड-ध्वजारोपण सम्पन्न किया।

म० १२९९ मिती प्रथम आश्विन वदि २ को महामत्री कुलधर ने समस्त राजलोक व नागरिको को आश्चर्यान्वित करने वाली, महा महोत्सव के साथ उल्लासपूर्वक भागवती दीक्षा स्वीकार की। सूरिजी द्वारा मत्रीश्वर का दीक्षा नाम कुलतिलक मुनि प्रसिद्ध किया गया।

म० १३१० वैशाख सुदि ११ को चारित्रवल्लभ, हेमपर्वत, अचलचित्त, लाभनिधि, मोदमन्दिर, गजकीर्त्ति, रत्नाकर, गतमोह, देवप्रमोद, वीराणद, विगतदोष, राजललित, बहुचरित्र, विमलप्रज्ञ, रत्ननिधान—पन्द्रह साधुओ की दीक्षा सम्पन्न हुई। इनमे चारित्रवल्लभ और विमलप्रज्ञ पिता-पुत्र थे।

इसी वैशाखी १३ स्वाति नक्षत्र शनिवार को श्री महावीर स्वामी के विधि-चैत्य मे राज श्री उदयसिहदेवादि राजपुरुषो व मत्री जैत्रसिह आदि राजमान्य व्यक्तियो तथा प्रल्हादनपुरीय, वागड देशीय समस्त समुदाय की उपस्थिति मे चतुर्विशति जिनालय, सप्ततिशत (१७०) जिन, सम्मेतशिखर नन्दीश्वर, तीर्थङ्कर मातृपट्ट, हीरा सम्बन्धी श्री नेमिनाथ, उज्जयिनी के लिए श्री महावीर स्वामी, चन्द्रप्रभ, शान्तिनाथ, व श्रेष्ठि हरिपाल के निर्मापित सुधर्मास्वामी, श्रीजिनदत्तसूरि, सीमधर स्वामी, युगमधर स्वामी आदि नाना प्रतिमाओ की प्रतिष्ठा सम्पन्न की। प्रमोदश्री गणिनी को महत्तरापद देकर लक्ष्मीनिधि नाम रखा एव ज्ञानमाला गणिनी को प्रवर्तिनी पद दिया।

सवत १३१३ फाल्गुन सुदि ४ को जावालिपुर-स्वर्णगिरि पर वाहित्रिक उद्धरण प्रतिष्ठापित श्री शान्तिनाथ प्रतिमा की महाप्रासाद (बडे मन्दिर) मे स्थापना की। मिती चैत्र सुदि १४ को कनककीर्त्ति, विबुधराज, राजशेखर, गुणशेखर, साधु एव जयलक्ष्मी, कल्याणनिधि, प्रमोदलक्ष्मी और गच्छवृद्धि साध्वियो की बडी दीक्षा हुई। इसके बाद वैशाख वदि १ को श्री अजितनाथ प्रतिमा की प्रतिष्ठा की। इन्हे पद्म, मूलिग ने प्रचुर द्रव्य व्यय पूर्वक द्वितीय देवगृह मे स्थापित की।

स० १३१४ माघ सुदि १३ के दिन राजा श्री उदयसिंह के प्रमाद से कनकगिरि-स्वर्णगिरि पर निर्मापित प्रधान प्रासाद पर ध्वजारोपण महोत्सव निर्विघ्नतया सम्पन्न हुआ।

स० १३१६ मिती माघ सुदि १ को जावालिपुर मे धर्मसुन्दरी गणिनी को प्रवर्त्तिनी पद से विभूषित किया गया। माघ सुदि ३ के दिन पूर्णशेखर व कनककलश नामक दो साधुओ की दीक्षा हुई। माघ सुदि ६ को स्वर्णगिरि के शान्तिनाथ प्रासाद पर स्वर्ण दण्ड कलश का आरोपण राजा श्री चाचिगदेव के राज्य मे उपर्युक्त पद्रू-मूलिग द्वारा सम्पन्न हुआ।

स० १३१७ माघ सुदि १२ को लक्ष्मीतिलक गणि को उपाध्याय पद व पद्माकर की दीक्षा बडे समारोह पूर्वक हुई। माघ सुदि १४ के दिन श्री जावालिपुरालङ्कार श्री महावीर जिनालय की चौवीस देहरियो पर स्वर्णकलश और स्वर्ण दण्ड-ध्वजारोपण सम्पन्न हुआ, यह उत्सव सर्व समुदाय ने कराया था।

स० १३२३ मार्गशीर्ष वदि ५ को नेमिध्वज साधु व विनयसिद्धि, आगम-वृद्धि साध्वियो की दीक्षा हुई। जावालिपुर मे ही स० १३२३ वैशाख सुदि १३ के दिन देवमूर्त्तिगणि को वाचनाचार्य पद दिया गया। द्वितीय ज्येष्ठ शुक्ल १० के दिन जेसलमेर के श्री पार्श्वनाथ विधि चैत्य पर चढाने के लिए सा० नेमिकुमार सा० गणदेव कारित स्वर्णमय दण्ड-कलश की प्रतिष्ठा की। विवेकसमुद्र गणि को वाचनाचार्य पद से अलकृत किया गया। मिती आषाढ वदि १ को हीराकर साधु को भागवती दीक्षा दी।

स० १३२४ मार्गशीर्ष वदि २ शनिवार के दिन कुलभूषण-हेमभूषण साधु द्वय तथा अनन्तलक्ष्मी, व्रतलक्ष्मी, एकलक्ष्मी, प्रधानलक्ष्मी साध्वियो की दीक्षा जावालिपुर मे बडे समारोह पूर्वक सम्पन्न हुई।

स० १३२५ वैशाख सुदि १० के दिन जावालिपुर के श्री महावीर विधि चैत्य मे पालनपुर, खभात, मेवाड, उच्च और वागड देश के सर्व समुदाय के एकत्र होने पर व्रतग्रहण, मालारोपण, सम्यक्त्व धारण, सामायकारोप आदि के लिए नन्दी मण्डाण बडे विस्तार से हुआ। गजेन्द्रबल साधु और पद्मावती साध्वी की दीक्षा हुई। मिति वैशाख सुदि १४ को महावीर विधि चैत्य और चतुर्विंशति जिन बिम्बो के २४ ध्वजादण्डो की, सीमधर-युगमधर-बाहु-सुबाहु बिम्बो की एव और भी बहुत सी प्रतिमाओ की प्रतिष्ठा बडे विस्तार से की गई। मिती जेठ

वदि ४ को सुवर्णगिरि पर स्थित शान्तिनाथ विधि चैत्य मे चौवीस देहरियो मे २४ जिनविम्बो का स्थापना महोत्सव बडे विस्तार मे सम्पन्न हुआ। उसी दिन धर्मतिलक गणि को वाचनाचार्य पद मे विभूपित किया गया।

स० १३२८ मिती वैशाख सुदि १४ के दिन जावालिपुर मे सा० क्षेमसिंह ने श्री चन्द्रप्रभ स्वामी का महाविम्व, मह० पूर्णसिह ने श्री ऋपभदेव, मह० ब्रह्मदेव[1] ने भगवान महावीर स्वामी के विम्ब का प्रतिष्ठा महोत्सव कराया। मिती ज्येष्ठ वदि ४ को हेमप्रभा साध्वी की दीक्षा हुई।

स० १३३० मिती वैशाख वदि ६ को प्रवोधमूर्त्ति गणि को वाचनाचार्य पद एव कल्याणऋद्धि गणिनी को प्रवर्त्तिनी पद से अलकृत किया। वैशाख वदि ८ के दिन श्री स्वर्णगिरि पर श्री चन्द्रप्रभ स्वामी का महाविम्ब शिखर मे स्थापित किया।

इस प्रकार प्रतिदिन विश्व को चमत्कृत करने वाले सच्चारित्र पूर्ण धर्म-प्रभावना करते हुए श्री महावीर भगवान के तीर्थ व शासन की प्रभावना[2] करते हुए, ससार समुद्र मे डूवते हुए प्राणियो का निस्तार करते व कल्पवृक्ष की भाँति समस्त प्राणियो का मनोरथ पूर्ण करते हुए अपनी वचन चातुरी से वृहस्पति का

---

१ ऊकेश वशी सा० ब्रह्मदेव लिखापित धर्मप्रकरण वृत्ति की अपूर्ण १६-१७ गाथा की प्रशस्ति मे श्री जिनेश्वरसूरिजी का वर्णन अपूर्ण रह गया है, किन्तु निम्नोक्त ३ श्लोको मे जावालिपुर-स्वर्णगिरि मे कराये हुए अष्टाह्निका महोत्सवादिका वर्णन इस प्रकार है —

श्री जावालिपुरे द्वितीय जिनराजोऽष्टाह्निका योऽद्भुता।
चैत्रे मासि तृतीयकां वितनुते मन्ये वृषोद्यानिका ॥८॥

श्री जावालिपुरे जिनेश भवने स्वश्रेयसेऽष्टाह्निका।
चैत्रेमासि चतुर्थिका गुरुतरा चक्रे तया स्वस्तिका ॥९॥

सोदर्या सुकृते श्री स्वर्णगिरे स्तया स्वजननी श्रेयोऽर्थमष्टाह्निकां।
चैत्रे मासि मथ सुवर्णान्या शुभायाश्विने ॥१०॥

२. ऊपर श्री जिनेश्वरसूरिजी के अनेक प्रकार से जालोर मे धर्म प्रभावना करने का वर्णन आ चुका है। श्री विजयनेमिसूरि शास्त्र भण्डार, खभात की अनेकान्त जय पताका वृत्ति की प्रशस्ति मे सा० विमलचन्द्र के पुत्रो द्वारा

भी पराभव करने वाले, लोकोत्तर ज्ञान के भण्डार श्री जिनेश्वरसूरि महाराज ने श्री जावालिपुर मे विराजते अपना अन्तिम समय ज्ञात कर सर्व सघ के समक्ष स० १३३१ मिती आश्विन कृष्ण ५ को प्रात काल अनेक गुण-मणि के निधान वा० प्रबोधमूर्ति को अपने पट्ट पर स्थापित किया[1] और उनका नाम श्री जिनप्रबोधसूरि दिया। उस समय श्री जिनरत्नसूरिजी पालनपुर थे अत उन्हे आदेश दिया कि चौमासे बाद समस्त गच्छ-समुदाय को एकत्र कर शुभ मुहूर्त मे विस्तार पूर्वक आचार्यपद स्थापनोत्सव कर देना। श्री जिनेश्वरसूरिजी ने अनशन ले लिया और पच परमेष्ठी के ध्यान मे समस्त जीवो को क्षामणा पूर्वक आश्विन कृष्ण ६ को रात्रि दो घडी जाने पर स्वर्ग की ओर प्रयाण कर गये। दूसरे दिन प्रात काल समस्त राजकीय लोगो के साथ बाजे गाजे से समारोह पूर्वक सूरिजी का अग्नि-सस्कार किया गया। उस स्थान पर सर्व समुदाय के साथ सा० क्षेमसिह ने स्तूप निर्माण कराया।

कविपल्हु आदि कृत षटपदानि मे श्री जिनेश्वरसूरि के परिचय के साथ जावालिपुर के स्तूप को पापनाशक और मनवछित पूर्ण करने वाला लिखा है। यहा एतद्विषयक दो पद्य उद्धत किये जाते है—

"स्वर्णगिरि शिखरालकार श्री चन्द्रप्रभ-श्री युगादिदेव-श्री नेमिनाथ प्रासाद विधापन श्री शत्रुञ्जयोज्जयन्तादि महातीर्थ सर्वसघयात्रा कारापण उपार्जित पुण्य प्रासादरोपित कलश ध्वजाभ्या सा० क्षेमसिह सा० चाहड सुश्रावकाभ्या स्वश्रेयसे" वाक्यो द्वारा उनके स्वर्णगिरि पर प्रासाद निर्माण और सघयात्रादि का उल्लेख है। यह पुस्तक उन्होने स० १३५१ माघ वदि १ को पालनपुर मे श्री जिनप्रबोधसूरि पट्टालकार श्री जिनचन्द्रसूरिजी के उपदेश से खरीद की थी। इसी विमलचन्द्र को पुत्री साऊ-रूयड ने श्री जिनेश्वरसूरिजी के पास पालनपुर मे दीक्षा ली थी और उसका नाम रत्नवृष्टि रखा गया था। यह दीक्षा स० १३१५-१६ मे आषाढ सुदि १० को हुई थी। स० १३३४ मार्गशीर्ष सुदि १३ को इन्ही रत्नवृष्टि साध्वी को प्रर्वात्तनी पद से विभूषित श्री जिनप्रबोधसूरि ने किया और स० १३६६ मे श्री जिनचन्द्रसूरिजी के भीमपल्ली से पत्तन, खभात और महातीर्थो की यात्रा के लिए निकले सघ मे ये रत्नवृष्टि १५ ठाणो से साथ थी।

सिरिजावाल पुरमि ठिएहिं, जहिं नियअतसमय मुणेवि।
नियय पट्ट मि सइहत्थि सठाविओ वाणारिउ पबोहमुत्ति गणि ॥३०॥

[श्री जिनेश्वरसूरि सयमश्री विवाह वर्णन रास]

बारह सय पणयालि (१२४५) मग्गसिरि गारसि सिय दिणि।
जसु कम्मणि सिरि नेमिचदु लखमिणि रजिय मणि॥
अट्ठावनइ (१२५८) खेडिनयरि चित्तासिय दुइ दिणि।
मजम सिरि सगहिय सति जिण भुवणहि भाविणि॥
पयठवणु जालउरि अठहुत्तरइ (१२७८) माह सुद्ध छट्ठिहि दिवसि।
तेरह इगतीसइ (१३३१) दिवगमणु किन्ह छट्ठि आसोय निसि॥३०॥

सो जावाल पुरमि रमि वर थूमह मडणु
भव सय अज्जिय दुट्ठ पाव कम्मह सखडणु
सयल भविय जल निवह चिमल मण वछिय पूरणु
देव असुर नर त्रिबुह गण वर मण रजणु।
जिणदत्तसूरि गुरु पट्टधरु वीर तित्य उद्धरण करु
जुगपहाणु जिणसरहसूरि हवउ सघ सुह रिद्धिकरु॥३१॥

जिनप्रबोधसूरि

श्री जिनेश्वरसूरिजी के आज्ञानुसार चातुर्मास पूर्ण होने पर श्री जिनरत्नाचार्य जावालिपुर पधारे और बडे विस्तार से सभी दिशाओ के समुदाय की उपस्थिति मे श्री जिनप्रबोधसूरिजी का पदस्थापना महोत्सव हुआ।[1] श्री चन्द्रतिलकोपाध्याय, श्रीतिलकोपाध्याय, वा० पद्मदेव गणि आदि अनेक साधुओ का सघ भी आ पहुचा और बडे भारी आडवर के साथ स० १३३१ फाल्गुन वदि ८ रविवार को यह महोत्सव सम्पन्न हुआ। मिती फाल्गुन सुदि ५ को स्थिरकीर्त्ति, भुवनकीर्त्ति मुनि व केवलप्रभा, हर्षप्रभा, जयप्रभा, यश प्रभा साध्वियो को श्री जिनप्रबोध सूरिजी ने दीक्षित किया।

---

१ जिनप्रबोधसूरि वोलिका गा-१२ मे—

जिणरयण सूरिहिं वित्थरेणय जस्स पयठवणू सावो
जावालिपुर वर मन रगि निम्मिउ निय गुरुहि आएसउ॥५॥

श्री जिनप्रबोधसूरि चतु सप्ततिका मे—

आवय तमभर दिणमणि नाणा जिण भवण हेमगिरि रुइरे।
आणद कद नीरे जावालिपुरमि पुर पवरे॥४४॥
अ दाय सालि भोयण कित्ती पीयूस जूस नियरेण।
आणदिय सयल जणो मुणिराउ जिणेसरो सूरी॥४५॥

स० १३३२ मिती जेठ वदि १ शुक्रवार के दिन श्री जावालिपुर मे सर्व समुदाय के समक्ष महान् विस्तार से क्षेमसिंह श्रावक ने प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन किया, जिसमे नमि-विनमि सेवित श्री आदीश्वर भगवान, महावीर स्वामी, अवलोकन शिखर-श्री नेमिनाथ विम्वो, शाम्ब-प्रद्युम्न प्रतिमा श्री जिनेश्वरसूरि मूर्त्ति, धनद यक्ष मूर्त्ति व स्वर्णगिरि श्री चन्द्रप्रभ स्वामी व वैजयन्ती की प्रतिष्ठा कराई। इस अवसर पर श्री योगिनीपुर-दिल्ली निवासी मन्त्रिदलीय हरु श्रावक ने श्री नेमिनाथ स्वामी की, सा० हरिचन्द्र श्रावक ने श्री शान्तिनाथ भगवान की व अन्य श्रावको ने भी बहुत से विम्वो की प्रतिष्ठा करवाई। मिती ज्येष्ठ वदि ६ को सुवर्णगिरि पर श्री चन्द्रप्रभ स्वामी का ध्वजारोपण हुआ। ज्येष्ठ वदि ९ को स्तूप मे श्री जिनेश्वरसूरिजी की मूर्त्ति स्थापित की गई। उसी दिन विमलप्रज्ञ को उपाध्याय पद व राजतिलक मुनि को वाचनाचार्य पद से विभूपित किया गया। मिती ज्येष्ठ सुदि ३ को गच्छकीर्त्ति, चारित्रकीर्ति, क्षेमकीर्त्ति मुनि और लब्धिमाला, पुण्यमाला साध्वियो की दीक्षा सम्पन्न हुई।

स० १३३३ माघ वदि १३ को श्री जावालिपुर मे कुशलश्री गणिनी को प्रवर्त्तिनी पद से अलकृत किया गया। इसी वर्ष सा० विमलचन्द्र सुत सा० क्षेमसिंह, सा० चाहड समायोजित मन्त्रि देदा के पुत्र मन्त्री महणसिंह के पृष्ठ रक्षक प्राग्भार से सा० क्षेमसिंह, सा० चाहड, सा० हेमचन्द्र, सेठ हरिपाल योगिनीपुर वास्तव्य सा० वेणू के पुत्र पूर्णपाल, सौवर्णिक धाधल सुत सा० भीम व उपर्युक्त देदा के पुत्र मन्त्री महणसिंह प्रमुख समस्त विधि सघ के गाढ उपरोध से श्री शत्रुजय महातीर्थ की यात्रा के हेतु मिती चैत्र वदि ५ को जावालिपुर से प्रस्थान हुआ। सद्गुरु श्री जिन प्रवोधसूरिजी महाराज के सानिध्य मे श्री जिनरत्नाचार्य श्री लक्ष्मीतिलकोपाध्याय, श्री विमलप्रज्ञोपाध्याय, वा० पद्मदेव गणि वा० राजतिलक गणि आदि २७ साधु सेवित चरण कमल व प्र० ज्ञानमाला गणिनी, प्र० कुशलश्री, प्र० कल्याणऋद्धि प्रभृति २१ साध्वियो का परिवार साथ था। धर्म प्रभावना करते हुए श्री श्रीमालनगर के श्री शान्तिनाथ विधि-चैत्य मे विधि सघ ने द्रम्म १४७४ सफल किये। पालनपुरादि मे विस्तार से चैत्यप्रवाडी करके श्री तारगाजी पहुचे। सा० नीबदेव सुत सा० हेमा ने द्र० ११७४

सग्ग सादिउ कामो छत्तीस गुणेहि आउहिच
निउण सरल धीर गम्भीर पहु तुम नाउ ॥४६॥

ससि[1] गज[3] गज[3] ससि[1] वरिसे आसोए किण्ह पचमी दिवसे।
सपए सखेवेण सय हत्थेण ठविय तुरिय ॥४७॥

देकर इन्द्रपद लिया। इन्द्र के परिवार ने द्रम्म २१०० देकर मन्त्री आदि पद ग्रहण किये। कलशादि सब मिलाकर विधि संघ ने—वहाँ द्रम्म ५२७४ व्यय किए। बीजापुर के वासुपूज्य विधि-चैत्य में माला ग्रहणादि द्वारा चार हजार द्रम्म सफल किये। श्री स्तंभन पार्श्वनाथ महातीर्थ में गोष्ठिक क्षेमंधर के पुत्र यशोधवल ने ११७४ द्रम्म देकर इन्द्र पद लिया। इन्द्र परिवार ने २४०० द्रम्म देकर मंत्री आदि पद लिए। कलश आदि सब मिला कर विधि संघ ने ७००० द्रम्म व्यय किए इसी प्रकार भरौच में समुदाय ने ४७०० द्रम्म दिए।

श्री तीर्थाधिराज शत्रुञ्जय पहुंचने पर आदीश्वर भगवान के चैत्य में योगिनीपुर निवासी सा० पूनपाल ने ३२०० द्रम्म से इन्द्र पद व इन्द्र परिवार ने मंत्री पद आदि लिए। सेठ हरिपाल ने ४२०० द्रम्म व अन्य सब मिला कर तीर्थ के भण्डार में २५० द्रम्म दिए।

श्री जिनप्रबोधसूरिजी ने मिती जेठ वदि ७ को श्री आदीश्वर भगवान के समक्ष जीवानंद साधु एवं पुष्पमाला, यशोमाला, धर्ममाला, लक्ष्मीमाला को दीक्षित कर विस्तार पूर्वक मालारोपण आदि महोत्सव द्वारा विधि-मार्ग की प्रभावना की। श्रेयांसनाथ स्वामी के विधिचैत्य में द्रम्म ७०८ दिए।

श्री उज्जयन्त-गिरनार तीर्थ में सा० मूलिग सुत सा० कुमारपाल ने द्रम्म ७५० से इन्द्रपद लिया व इन्द्र परिवार ने २१५० द्रम्म से मंत्री आदि पद लिए।

वित्थरहि अज्जिय जलहर पीयूष किरण रवि कित्ति।
विज्जा नई समुद्दं जिणरयण मुणिंद साइसिय ॥४८॥

नाणा राहण भूसण अणसणु सुगइ गइंद मारुढो।
सज्जाण सिल्ह हत्थो तक्खणि सग्ग सुह पत्तो ॥४९॥ षड्भि कुलकम् ॥

उब्भड कसाय रिउ भड थड विहडण गहिय विक्कम फलेहिं।
खित्तेसु दीन दुत्थिय सत्थे सुय विहधु दितेहिं ॥५०॥

दस दिसि मिलंत चउविह संघेहिं तित्थनाह तित्तेहिं।
परिवरिओ मुणिराओ विहिणा जिणरयणसूरिवरो ॥५१॥

मुणिचक्कित्तो पहुत्त सफग्गुण कसिणट्ठमीइ ठाविसु।
सयल जग सज्जणाण नयणा माणसुं परमाय च ॥ २॥ त्रिभि कुलकम् ॥

स० १३३२ मिती जेठ वदि १ शुक्रवार के दिन श्री जावालिपुर मे सर्व समुदाय के समक्ष महान् विस्तार से क्षेमसिंह श्रावक ने प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन किया, जिसमे नमि-विनमि सेवित श्री आदीश्वर भगवान, महावीर स्वामी, अवलोकन शिखर-श्री नेमिनाथ विम्बो, शाम्ब-प्रद्युम्न प्रतिमा श्री जिनेश्वरसूरि मूर्त्ति, धनद यक्ष मूर्त्ति व स्वर्णगिरि श्री चन्द्रप्रभ स्वामी व वैजयन्ती की प्रतिष्ठा कराई। इस अवसर पर श्री योगिनीपुर-दिल्ली निवासी मन्त्रिदलीय हरु श्रावक ने श्री नेमिनाथ स्वामी की, सा० हरिचन्द्र श्रावक ने श्री शान्तिनाथ भगवान की व अन्य श्रावको ने भी बहुत से बिम्बो की प्रतिष्ठा करवाई। मिती ज्येष्ठ वदि ६ को सुवर्णगिरि पर श्री चन्द्रप्रभ स्वामी का ध्वजारोपण हुआ। ज्येष्ठ वदि ९ को स्तूप मे श्री जिनेश्वरसूरिजी की मूर्त्ति स्थापित की गई। उसी दिन विमल-प्रज्ञ को उपाध्याय पद व राजतिलक मुनि को वाचनाचार्य पद से विभूषित किया गया। मिती ज्येष्ठ सुदि ३ को गच्छकीर्त्ति, चारित्रकीर्ति, क्षेमकीर्त्ति मुनि और लब्धिमाला, पुण्यमाला साध्वियो की दीक्षा सम्पन्न हुई।

स० १३३३ माघ वदि १३ को श्री जावालिपुर मे कुशलश्री गणिनी को प्रवर्त्तिनी पद से अलकृत किया गया। इसी वर्ष सा० विमलचन्द्र सुत सा० क्षेमसिंह, सा० चाहड समायोजित मन्त्रि देदा के पुत्र मत्री महणसिंह के पृष्ठ रक्षक प्राग्भार से सा० क्षेमसिंह, सा० चाहड, सा० हेमचन्द्र, सेठ हरिपाल योगिनीपुर वास्तव्य सा० वेणू के पुत्र पूर्णपाल, सौवर्णिक धाधल सुत सा० भीम व उपर्युक्त देदा के पुत्र मन्त्री महणसिंह प्रमुख समस्त विधि सघ के गाढ उपरोध से श्री शत्रु जय महातीर्थ की यात्रा के हेतु मिती चैत्र वदि ५ को जावालिपुर से प्रस्थान हुआ। सद्गुरु श्री जिन प्रबोधसूरिजी महाराज के सानिध्य मे श्री जिनरत्नाचार्य श्री लक्ष्मीतिलकोपाध्याय, श्री विमलप्रज्ञोपाध्याय, वा० पद्मदेव गणि वा० राजतिलक गणि आदि २७ साधु सेवित चरण कमल व प्र० ज्ञानमाला गणिनी, प्र० कुशलश्री, प्र० कल्याणऋद्धि प्रभृति २१ साध्वियो का परिवार साथ था। धर्म प्रभावना करते हुए श्री श्रीमालनगर के श्री शान्तिनाथ विधि-चैत्य मे विधि सघ ने द्रम्म १४७४ सफल किये। पालनपुरादि मे विस्तार से चैत्यप्रवाडी करके श्री तारगाजी पहुचे। सा० नीबदेव सुत सा० हेमा ने द्र० ११७४

सग्ग सादिउ कामो छत्तीस गुणेहिं आउहिच
निउण सरल धीर गम्भीर पहु तुम नाउ ॥४६॥

ससि[1] गज[3] गज[3] ससि[1] वरिसे आसोए किण्ह पचमी दिवसे।
सपए सखेवेण सय हत्थेण ठविय तुरिय ॥४७॥

देकर इन्द्रपद लिया। इन्द्र के परिवार ने द्रम्म २१०० देकर मत्री आदि पद ग्रहण किये। कलशादि सब मिलाकर विधि सघ ने—वहाँ द्रम्म ५२७४ व्यय किए। बीजापुर के वासुपूज्य विधि-चैत्य मे माला ग्रहणादि द्वारा चार हजार द्रम्म सफल किये। श्री स्तभन पार्श्वनाथ महातीर्थ मे गोष्टिक क्षेमधर के पुत्र यशोधवल ने ११७४ द्रम्म देकर इन्द्र पद लिया। इन्द्र परिवार ने २४०० द्रम्म देकर मत्री आदि पद लिए। कलश आदि सब मिला कर विधि सघ ने ७००० द्रम्म व्यय किए इसी प्रकार भरौच मे समुदाय ने ४७०० द्रम्म दिए।

श्री तीर्थाधिराज शत्रुञ्जय पहुचने पर आदीश्वर भगवान के चैत्य मे योगिनीपुर निवासी सा० पूनपाल ने ३२०० द्रम्म से इन्द्र पद व इन्द्र परिवार ने मत्री पद आदि लिए। सेठ हरिपाल ने ४२०० द्रम्म व अन्य सब मिला कर तीर्थ के भण्डार मे २५० द्रम्म दिए।

श्री जिनप्रबोधसूरिजी ने मिती जेठ वदि ७ को श्री आदीश्वर भगवान के समक्ष जीवानद साधु एव पुष्पमाला, यशोमाला, धर्ममाला, लक्ष्मीमाला को दीक्षित कर विस्तार पूर्वक मालारोपण आदि महोत्सव द्वारा विधि-मार्ग की प्रभावना की। श्रेयासनाथ स्वामी के विधिचैत्य मे द्रम्म ७०८ दिए।

श्री उज्जयन्त-गिरनार तीर्थ मे सा० मूलिग सुत सा० कुमारपाल ने द्रम्म ७५० से इन्द्रपद लिया व इन्द्र परिवार ने २१५० द्रम्म से मत्री आदि पद लिए।

वित्थरहि अज्जिय जलहर पीयूष किरण रवि कित्ति।
विज्जा नई समुद्द जिणरयण मुणिद माइसिय ॥४८॥

नाणा राहण भूसण अणसणु सुगइ गइद मारुढो।
सज्जाण सिल्ह हत्थो तक्खणि सग्ग सुह पत्तो ॥४९॥ षड्भि कुलकम् ॥

उब्भड कसाय रिउ भड थड विहडण गहिय विक्कम फलेहिं।
खित्तेसु दीन दुत्थिय सत्थे सुय विहधु दिंतेहिं ॥५०॥

दस दिसि मिलत चउविह सघेहिं तित्थनाह सिन्नेहिं।
परिवरिओ मुणिराओ विहिणा जिणरयणसूरिवरो ॥५१॥

मुणिचक्कित्तो पहुत्त सफग्गुण कसिणट्ठमीइ ठाविसु।
सयल जग सज्जणण नयणा माणसु परमाय च ॥ २॥ त्रिभि.कुलकम् ॥

सा० हेमचन्द्र ने अपनी माता राजू के लिए दो हजार द्रम्म देकर माला ग्रहण की। सब मिला कर श्री सघ ने वहा २३००० द्रम्म सफल किए।

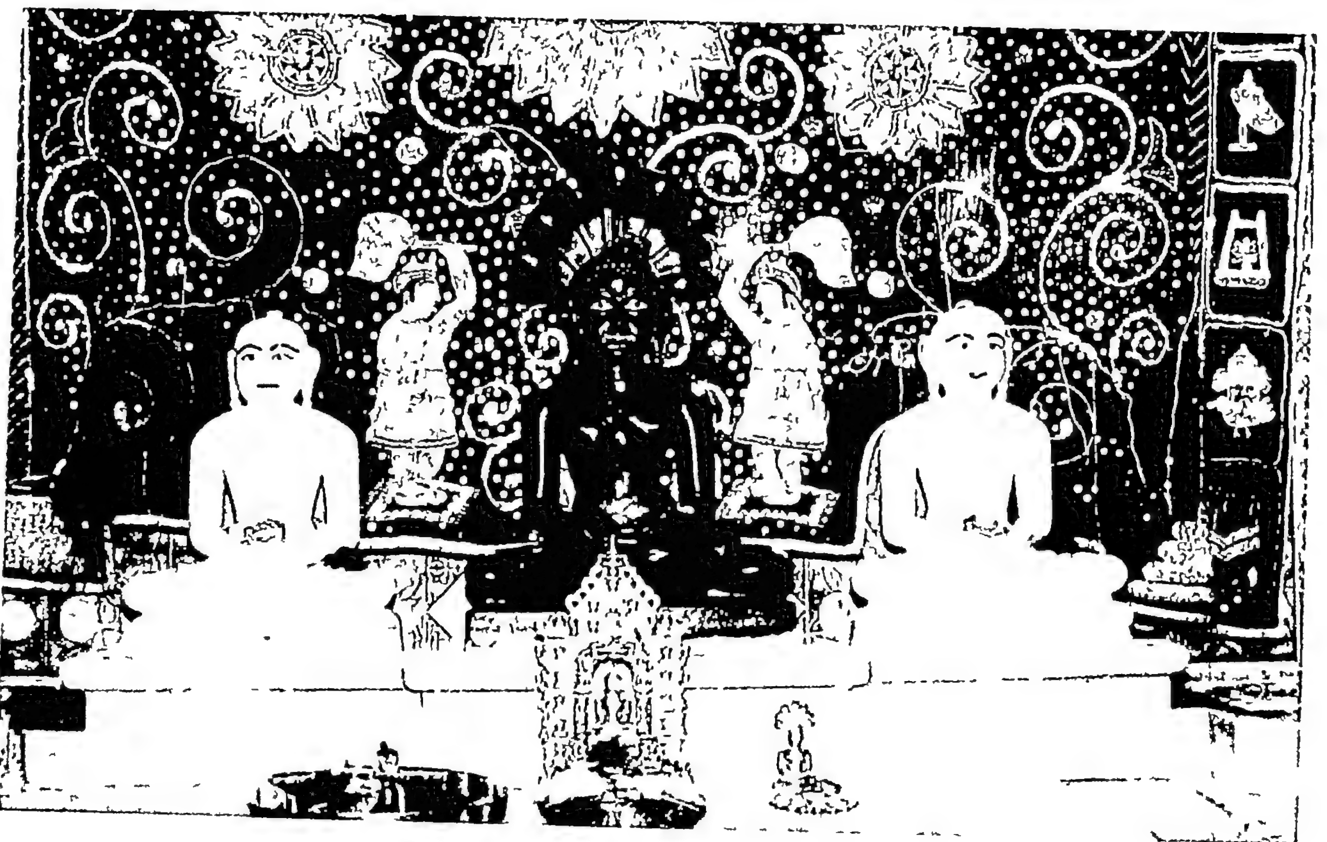
इस प्रकार स्थान-स्थान पर प्रवचनादि धर्म प्रभावना द्वारा जन्म सफल करते विधि-सघ के साथ निर्विघ्न महातीर्थों की यात्रा करके श्री जिनप्रवोधसूरिजी आदि चतुर्विध सघ समन्वित सा० क्षेमसिंह ने मिती आषाढ सुदि १४ को देवालय सहित जावालिपुर मे प्रवेश महोत्सव सम्पन्न किया।

सवत् १३३९ मे अनेक नगर के सघो के साथ श्री जिनप्रवोधसूरिजी श्री जिनरत्नाचार्य, देवाचार्य, वाचनाचार्य विवेकसमुद्रादि मुनि-मण्डल परिवृत आबूजी की यात्रा करके जावालिपुर पधारे। समस्त सघ का प्रवेशोत्सव बड़े धूम-धाम से हुआ। इसी वर्ष ज्येष्ठ वदी ४ को जगच्चन्द्र मुनि, कुमुदलक्ष्मी, भुवनलक्ष्मी साध्वियो की दीक्षा हुई। पचमी के दिन चन्दनसुन्दरी गणिनी को महत्तरा पद से विभूषित किया। उनका नाम चन्दनश्री हुआ। इसके वाद श्रीसोम महाराजा की वीनती से पूज्य श्री ने समियाणा मे चातुर्मास किया। तत्पश्चात् महाराजा श्री कर्ण के सैन्य-परिवार सहित सामने आने पर स० १३४० मे फाल्गुन चौमासी पर जैसलमेर पधारे। अक्षय तृतीया को अष्टापद प्रासाद की बिम्ब व ध्वजादण्ड की प्रतिष्ठा मे श्री जावालपुर का सघ भी सम्मिलित हुआ था।

भगवान महावीर के शासन की प्रभावना करने वाले श्री जिनप्रवोधसूरिजी महाराज के देह मे दाहज्वर हो गया, तब आपने ध्यान वल से अपना आयु अल्प ज्ञात कर अविच्छिन्न प्रयाण से जावालिपुर पधारे। श्री महावीर स्वामी के महातीर्थ मे समस्त लोगो के चित्त को चमत्कार पैदा करने वाले प्रवेशोत्सव मे नाना प्रकार के वाजित्र, गीत-गान और धवल-मङ्गल पुराङ्गनाओ द्वारा नृत्य और दीन दुखियो को महादान देने का आयोजन था। सूरि महाराज ने अक्षय-तृतीया के दिन अपने पट्ट पर बडे भारी महोत्सव पूर्वक श्रीजिनचन्द्रसूरि को स्थापित किया। इसी दिन राजशेखर गणि को वाचनाचार्य पद दिया। तदनन्तर वैशाख सुदि ८ को सकल सघ के साथ विस्तारपूर्वक मिथ्यादुष्कृत दिया और चढते हुए शुभ परिणामो मे स्थिर रह कर भावना भाते हुए देव-गुरु के चरणो मे सद्ज्ञान पूर्वक आराधना करते स्वमुख से पच परमेष्टी महामत्र उच्चारण करते हुए मिती वैशाख शुक्ल ११ को पूज्य सूरि महाराज श्री जिनप्रबोधसूरिजी स्वर्गवासी हुए।

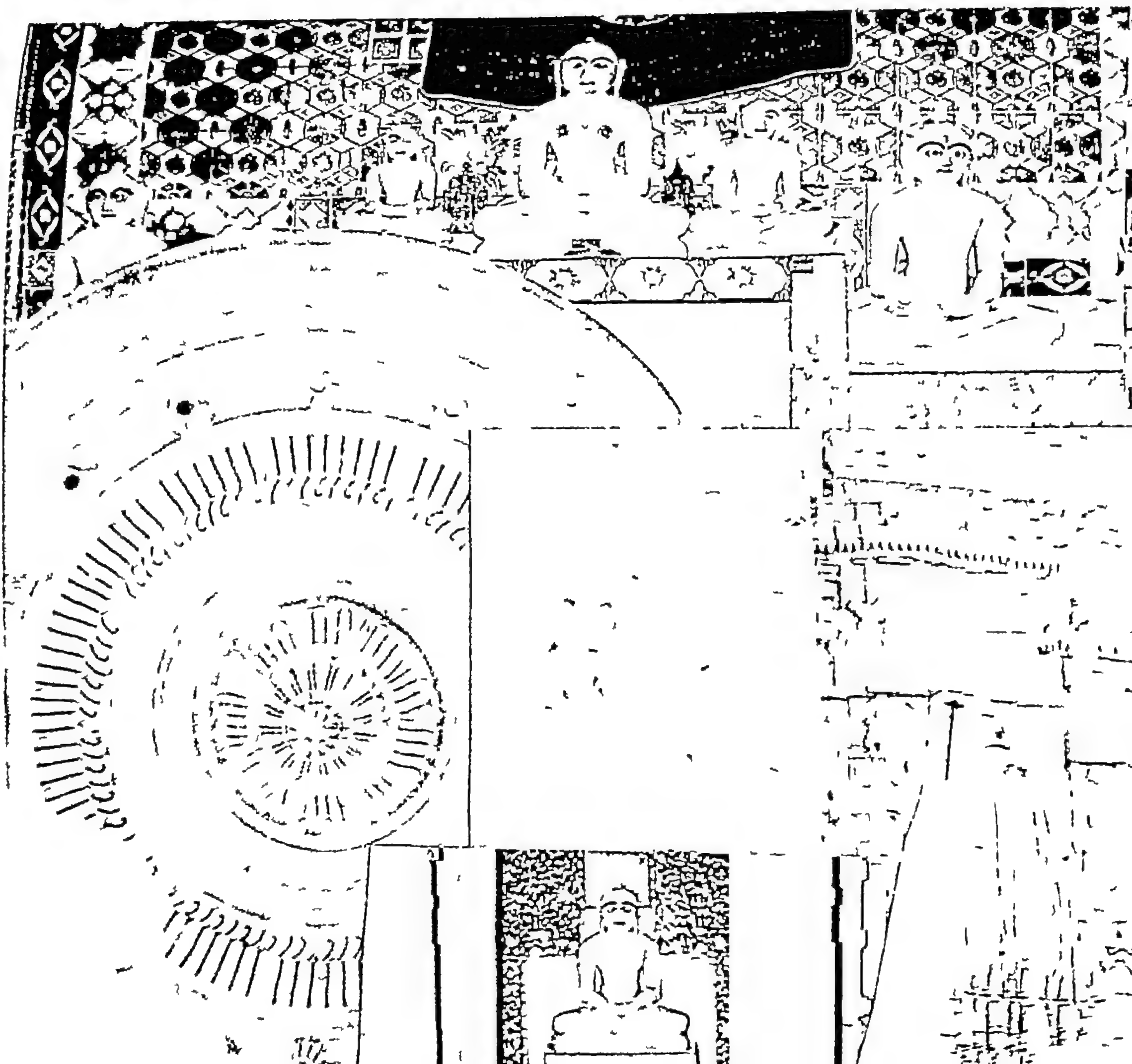


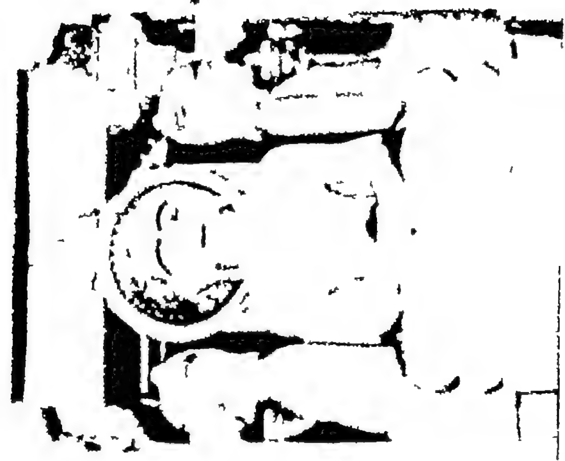
श्री महावीर स्वामी मन्दिर - स्वर्णगिरि, जालोर



श्री गौड़ी पार्श्वनाथ मन्दिर, जालोर

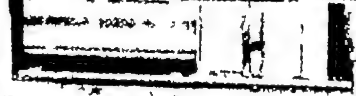
श्री गौड़ी पार्श्वनाथ मन्दिर जालोर

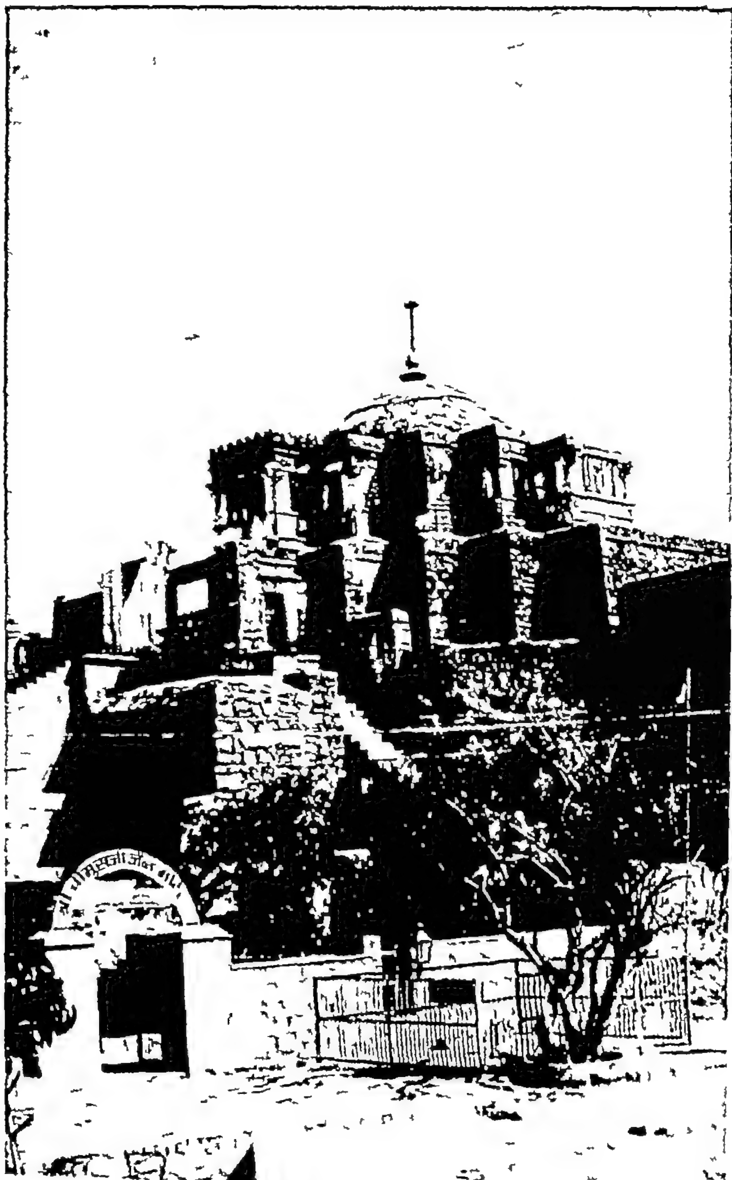




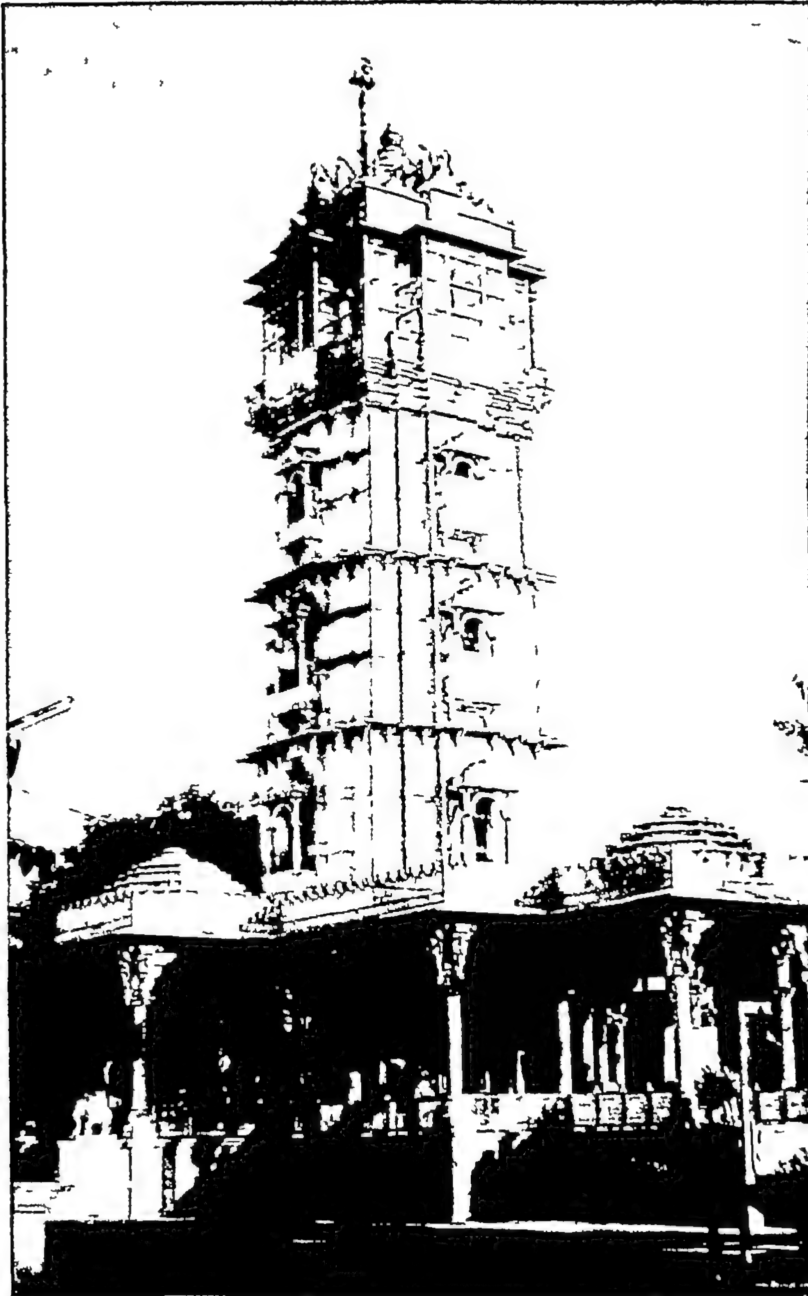




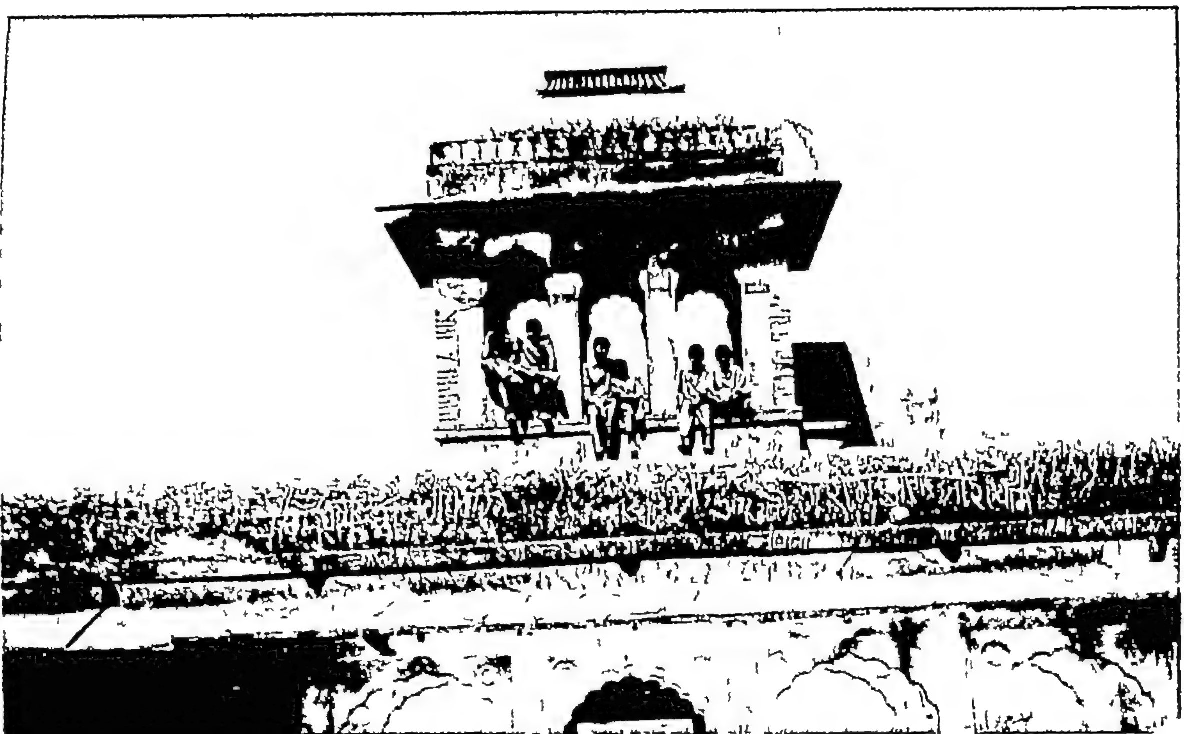


श्री चौमुखजी जैन मन्दिर स्वर्णगिरि दुर्ग, जालोर



कीर्त्ति स्तम्भ - नन्दीश्वर तीर्थ, जालोर



श्री-स्वर्णगिरि-महल, जालोर



श्री स्वर्णगिरि, जालोर

श्री जिनचन्द्रसूरि[1]

स० १३४२ मिती बैशाख शुक्ल १० के दिन जावालिपुर मे श्री महावीर स्वामी के विधि चैत्य मे श्री जिनचन्द्रसूरिजी महाराज ने महा महोत्सव पूर्वक प्रीतिचन्द्र, सुखकीर्त्ति नामक क्षुल्लक द्वय व जयमजरी, रत्नमञ्जरी, शीलमञ्जरी नामक क्षुल्लिका त्रय दीक्षित की। उसी दिन वाचनाचार्य विवेकसमुद्र गणि को अभिषेक पद, सर्वराज गणि को वाचनाचार्य पद, बुद्धिसमृद्धि गणिनो को प्रवर्त्तिनी पद से विभूषित किया। सप्तमी के दिन सम्यक्त्व ग्रहण, मालारोपण, सामायकारोप अदि नन्दि-महोत्सव किए गए।

मिती ज्येष्ठ वदि ९ को सेठ क्षेमसिह द्वारा निर्मापित श्री अजितनाथ स्वामी की २७ अगुल प्रमाण की रत्नमय प्रतिमा, ऋषभदेव, नेमिनाथ और पार्श्वनाथ प्रतिमाओ की तथा मत्री देदा कारित युगादिदेव, नेमिनाथ, श्री पार्श्वनाथ विम्बो

---

१ देधाकुलि सिरि देवराउ मती सुपसिद्धउ
कामलदेवि कलत्तु तासु सीलिण सुसमिद्धउ
ताण पुत्त सिरिखभराउ बालुवि गुणसायरु
लइय दिक्ख गुरु पासि सिक्खइ सिक्ख करि आयरु
जावालिनयरि वीरह भुवणि जिणपवोह गुरु चक्कवइ
जिणचदसूरि तसुनामु धुरि गुरु उच्छवि नियपइ ठवइ ॥४१॥ [षट्पद मे]

श्री जिनकुशलसूरिजी कृत "श्री जिनचन्द्रसूरि चतु सप्ततिका" मे श्री जिनप्रबोधसूरिजी के पट्ट पर इन्हे अभिषिक्त करने का वर्णन इस प्रकार हैं—

जुगवर नव नवुच्छव पवरे, जावालिपुरवरे पत्तो।
सिरिजिणपबोह गुरुणो, वदिय गुरु विबुह कम कमला ॥३०॥

तत्थ सिरि वीर विहि चेइयमि सुरवइ विमल तुल्लमि।
तेरहसय इगयाले (१३४१) वइसाह सुद्ध तीयमि ॥३१॥

सिरि जिणपवोह गुरुणा, निय हत्थेण स गच्छ भार धुरा।
गुरु रयणाण तुम्हाण, सठविया सघ पच्चक्ख ॥३२॥

मति कुल कमल दिणयर, नाणा मइ रयण रोहण गिरिस्स।
तुह सूर मंत जा सो, गुरु राएहिं कओ ठाणे ॥३३॥

जिण तुल्ल रूव तिहुयण, आणिदण चद चदिमा पडिम।
सिरि जिणचद मुणीसर, इइ नाम वेइ तुम्ह गुरु ॥३४॥

की , भाण्डागारिक छाहड कारित श्री शान्तिनाथ स्वामी के महत्तम विम्व की, वैद्य देहडि कारित अष्टापद ध्वजा-दण्ड की तथा अन्य भी वहुत से जिन विम्वो की प्रतिष्ठा वडे विस्तार से श्री सामन्तसिह महाराजा के विजयराज्य मे की। यह प्रतिष्ठा महोत्सव श्री जिनचन्द्रसूरिजी के कर कमलो से सव के चित्त को चमत्कार पैदा करने वाला और पापनाशक था। प्रसन्न चित्त महाराजा श्री सामन्तसिह के सानिध्य से सकल स्वपक्ष-परपक्ष आह्लादकारी व विधिमार्ग प्रभावक प्रचुर द्रव्य व्यय से इन्द्र महोत्सवादि सम्पन्न हुये। मिती ज्येष्ठ वदि ११ को वा० देवमूर्त्ति गणि को अभिषेक पद व मालारोपण-नन्दिमहोत्सवादि हुए।

सवत् १३४४ मिती मार्गशीर्ष सुदि १० को महावीर विधि चैत्य मे सा० कुमारपाल के पुत्र प० स्थिरकीर्त्ति गणि को श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने आचार्य पद देकर श्री दिवाकराचार्य नाम से प्रसिद्ध किया।

सवत् १३४५ आषाढ सुदि ३ को मतिचन्द्र और धर्मकीर्त्ति की दीक्षा हुई। वैशाख बदी १ को पुण्यतिलक, भुवनतिलक और चारित्रलक्ष्मी साध्वी की दीक्षा हुई। राजदर्शन गणि को वाचनाचार्य पद से विभूषित किया।

स० १३४६ माघ वदि १ को सा० क्षेमसिह भा० वाहड द्वारा कारित सुवर्णगिरि के श्री चन्द्रप्रभ जिनालय के पास आदिनाथ नेमिनाथ विम्वो को मण्डप के खत्तक मे व समेतशिखर के २० बिम्वो का स्थापना महोत्सव हुआ।

श्री जिनप्रबोधसूरि जी के स्तूप मे मूर्त्ति की स्थापना व ध्वज-दण्डारोपण महोत्सव सा० अभयचद द्वारा किया गया। इनकी प्रतिष्ठा वैशाख सुदि ७ को हुई थी व निर्माण भी सा० अभयचद ने करवाया था।

स० १३४९ मिती भाद्रपद कृष्ण ८ को सार्धमिक सत्राकार सघपुरुष सा० अभयचन्द्र सुश्रावक की सस्तारक दीक्षा हुई, इनका नाम अभयशेखर रखा गया।

श्री जिनचन्द्रसूरिजी महाराज स० १३५३ का चातुर्मास बीजापुर करके जावालिपुर सघ की विनती से विहार करके पधारे। अनेक नगरो के सघ एकत्र होने पर चैत्य परिपाटी आदि महामहोत्सवपूर्वक वैशाख बदि ५ को जावालिपुर से प्रस्थान करके वहुत सी मुनि मण्डली व चतुर्विध सघ सहित आवू तीर्थ की यात्रार्थ पधारे। विधिमार्ग सघ ने इन्द्र पद, स्नात्र, ध्वजारोपादि महोत्सवो के उद्देश्य से बारह हजार द्रम्म सफल किये। इसके बाद कुशलपूर्वक सघ

जावालिपुर लौटा और विस्तारपूर्वक प्रवेशोत्सव हुआ। इसमे सा० सलखण श्रावक के पुत्ररत्न सा० सीहा का अच्छा योगदान रहा।

स० १३५४ मिती ज्येष्ठ बदि १० को जावालिपुर मे श्री महावीर विधि चैत्य मे सा० सलखण के पुत्र सा० सीहा की ओर से दीक्षा-मालारोपणादि महोत्सव आयोजित हुए, जिसमे वीरचन्द्र, उदयचन्द्र, अमृतचन्द्र साधु और जयसुन्दरी साध्वी की भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई।

स० १३६१ मे पूज्य श्री ने शम्यानयन (सिवाणा) के शान्तिनाथ विधि चैत्य मे प्रतिष्ठा महोत्सव कराया जिसमे जावालिपुरीय सघ भी सम्मिलित हुआ था।

जावालिपुरीय सघ की अभ्यर्थना से श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने पधारकर भगवान महावीर को वन्दन किया। सवत् १३६४ वैशाख कृष्ण १३ को म० भुवनसिंह, सा० सुभट, म० नयनसिंह, म० दुसाज म० भोजराज और सा० सीहा आदि समस्त सघ के प्रोत्साहन से पूज्य श्री ने राजगृहादि महातीर्थों को नमस्कार करके आने पर वा० राजशेखर गणि को आचार्य पद से विभूषित किया गया।

स० १३६७ मे श्री जिनचन्द्रसूरिजी के तत्वावधान मे भीमपल्ली से शत्रु जयादि तीर्थ-यात्रा के हेतु महान् सघ निकला, जिसमे जावालिपुर का सघ भी सम्मिलित हुआ था और यहां के प्रधान महाजन सा० देवसीह सुत सा० थाणलनन्दन सा० कुलचन्द्र, सा० देदा सुश्रावको ने दोनों महातीर्थों पर इन्द्र पद आदि ग्रहण कर प्रचुर द्रव्य सार्थक किया था।

स० १३७१ मे श्री जिनचन्द्रसूरिजी महाराज श्री सघ की गाढ अभ्यर्थना से जावालिपुर पधारे और मिती ज्येष्ठ बदि १० को म० भोजराज, देवसिंह आदि समस्त सघ द्वारा दीक्षा-मालारोपण-नन्दी महोत्सव आदि का समारोह आयोजित हुआ। देवेन्द्रदत्त मुनि, पुण्यदत्त, ज्ञानदत्त और चारुदत्त मुनि तथा पुण्यलक्ष्मी, ज्ञानलक्ष्मी, कमललक्ष्मी, मतिलक्ष्मी साध्वियो को भागवती दीक्षा प्रदान की।

इसके बाद जावालिपुर मे म्लेच्छो द्वारा भग हुआ।

श्री जिनकुशलसूरि

स० १३८० मे योगिनीपुर-दिल्ली के सघपति रयपति का सघ श्रीजिन-कुशलसूरिजी महाराज के नेतृत्व में शत्रुञ्जय महातीर्थ गया। वह विशाल सघ जावालिपुर आया और उसका राजलोक-नागरिक लोगो ने आडम्बर पूर्वक नगर

प्रवेश कराया एव चैत्य-परिपाटी प्रभावनादि श्री सघ ने की। सा० महिराज आदि स्थानीय लोग यात्री-सघ मे सम्मिलित हुए।

स० १३८१ मे पत्तन मे श्री जिनकुशलसूरिजी ने विशाल प्रतिष्ठा कराई थी जिसमे जावालिपुर के मत्री भोजराज पुत्र म० सलखणसिंह रगाचार्य लक्षण आदि सम्मिलित हुए। इनमे जावालिपुर के लिए श्री महावीर स्वामी आदि प्रतिमाओ की प्रतिष्ठा हुई थी। उसी वर्ष फिर भीमपल्ली से विशाल यात्री सघ निकाला जिसमे जावालिपुर वास्तव्य सा० पूर्णचन्द्र सा० सहजा आदि सम्मिलित हुए थे।

स० १३८३ मे जावालिपुर सघ की बीनती से श्री जिनकुशलसूरिजी महाराज वाहडमेर से विहार कर लवणखेटक, सम्यानयन होते हुए जालोर पधारे। यहा का सघ नाना प्रकार के उत्सव करने को प्रस्तुत था और सूरिजी का प्रवेशोत्सव वडे समारोहपूर्वक कराया। तीर्थाधिराज श्री महावीर प्रभु के चरणो मे वन्दन किया। मत्रीश्वर कुलधर के पुत्र म० भोजराज के पुत्र म० सलखणसिंह सा० चाहड पुत्र सा० झाझण प्रमुख सघ की वीनति से नाना नगरो के सघ की उपस्थिति मे महान् उत्सवो का प्रारम्भ हुआ। दश-पन्द्रह दिन पहले से दीक्षार्थियो के उत्सव, ताल्हारास, स्वर्ण-रजत-वस्त्र-अन्न दान, गीत-गान सघ पूजा स्वधर्मीवात्सल्यादि के साथ साथ अमारि उद्घोषणा द्वारा नाना धार्मिक प्रभावना के कार्य सम्पन्न हुए। स० १३८३ फाल्गुन बदि ९ के दिन प्रतिष्ठा, व्रतग्रहण, मालारोपण, सम्यक्त्वारोप, नन्दी महोत्सवादि विधान हिन्दु-मुस्लिम सबके चित्त को चमत्कृत करने वाले निर्विघ्न सम्पन्न हुए। राजगृह महातीर्थ के वैभारगिरि पर स्थापनार्थ ठ० प्रतापसिंह के पुत्र ठ० अचल कारित चतुर्विंशति जिनालय के मूलनायक योग्य महावीर स्वामी आदि की अनेक पाषाण व धातु निर्मित प्रतिमाए, गुरुमूर्त्तियाँ व अधिष्ठायकादि की प्रतिष्ठा हुई। न्यायकीर्त्ति, ललितकीर्त्ति, सोमकीर्त्ति, अमरकीर्त्ति, नमिकीर्त्ति, देवकीर्त्ति-६ मुनियो को दीक्षित किया। अनेक श्रावक-श्राविकाओ ने माला, सम्यक्त्वादि व्रत, द्वादश व्रत अङ्गीकार किए।

युगप्रधानाचार्य गुर्वावली के प्रताप से हमे जालोर के इतिहास सम्बन्धी महत्वपूर्ण इतनी जानकारी मिल सकी है इसके पश्चात् कोई व्यवस्थित इतिहास उपलब्ध नही है।

श्री जिनभद्रसूरिजी महाराज एक महान् प्रभावक आचार्य हुए हैं जिन्होने जैसलमेर आदि अनेक स्थानो मे ज्ञान भण्डार स्थापित किए थे। श्री समय-

सुन्दरोपाध्याय कृत अष्टलक्षी प्रशस्ति के अनुसार उन्होने जावालिपुर-जालोर मे भी ज्ञान-भण्डार स्थापित किया था। यत —

श्री मज्जेसलमेरु दुर्ग नगरे जावालपुर्या तथा
श्री मद्देवगिरौ तथा अहिपुरे श्री पत्तने पत्तने
भाण्डागार मबो भरद् वरतरै र्नानाविधै पुस्तकै
स श्रो मज्जिनभद्रसूरि सुगुरु र्भाग्याद्भुतोऽभूद्भुवि ॥२१॥

युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि

विहार पत्र के अनुसार श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने स० १६४१ मे जालोर मे चातुर्मास किया था और प्रतिपक्षियो से शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त की थी।

इसी वर्ष श्री जिनचन्द्रसूरिजी के सान्निध्य मे जालोर से आबू तीर्थ की यात्रा के हेतु सघ निकला था। जिसके वर्णन स्वरूप 'अर्बुदतीर्थ चैत्य परिपाटी' (गा-२१) मे कवि लब्धिकल्लोल ने लिखा है कि—

भगवान पार्श्वनाथ को वन्दन कर जालोर का सघ युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिजी के साथ आबू यात्रा के लिए चला जिसका सक्षिप्त वर्णन करते हुए कवि लिखता है कि– सर्वप्रथम ऋषभदेव, शान्तिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर भगवान ने पाचो जिनालयो को वन्दन कर दादा साहब श्री जिनकुशलसूरिजी के चरण कमलो मे नमस्कार कर सघ ने प्रयाण किया। पहले सुविधिनाथ जिन फिर उडू गांव मे, गोहली मे, सीरोही मे आदिनाथादि ७ जिनालय, सघणोद, हम्मीरपुर, सीरोढी, पालडी हणाद्रपुर, के जिनालयो को वन्दन कर क्रमश देवलवाडा पहुँचे। वहाँ विमलवसही, लूणिगवसई भीमावसही, मडलीक (खरतर) वसही और हुम्बड वसही की यात्रा करके अचलगढ गए। वरराध विहार में शान्तिनाथ भगवान और युगप्रवर श्री कीर्त्तिरत्नसूरिजी (की प्रतिमा) को वन्दन किया। सहसा के चौमुख प्रासाद मे आदिनाथ, तीसरे मन्दिर मे कुन्थुनाथ प्रभु को वन्दन किया। ओरीसइ मे महावीर भगवान की यात्रा कर लौटते हुए फिर हणाद्रा, वेलागिरि, कालन्द्री होकर कुशलक्षेम पूर्वक अपने घर सोवनगिरि-जालोर पहुचे। (युगप्रधान जिनचन्द्रसूरिजी गुजराती पृ० ३०५)

सम्राट अकबर के आमन्त्रण से खभात से लाहौर जाते हुए स० १६४८ का चातुर्मास अकवर के वचनानुसार जालोर मे बिताया जिसका वर्णन श्री सुमति कल्लोल कृत गीत मे इस प्रकार है—

"गुरु जालउरि पधारिया, तिहा किणि रह्या चउमासि।
श्रीजी नइ वचनइ करी, पूरइ भवियणरे २ मन केरी आसिकि ॥६॥"

कविवर समयसुन्दर कृत अष्टक मे—
"एजी गुर्जरतें गुरूराज चले, विच मे चौमास जालोर रहे"

श्रीजिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास मे—
सोवनगिरि श्री सघ आवउ, उच्छव कर गुरू वदिया
× × × ×
गुरू सघ श्री जावालपुर नइ, वेगि पहुता पारणइ।
अति उच्छव कीयउ साह वन्नइ, सुजस लीधउ तिणि खणइ ॥६६॥

कवि कुशललाभ कृत सघपति सोमजी के सघ यात्रा स्तवन मे जालोर के सघ-के सम्मिलित होने का उल्लेख है। यह स्तवन गा० ७५ का अपूर्ण है जिसका सार जैन सत्यप्रकाश वर्ष १८ अक ३ मे प्रकाशित है।

साधुकीर्त्ति उपाध्याय

सुप्रसिद्ध विद्वान उपाध्याय साधुकीर्त्ति जी ने जालोर मे विचरण किया था। स० १६४६ मे आप का यही पर स्वर्गवास हुआ था। श्री जयनिधान कृत साधुकीर्त्ति गुरु स्वर्गगमन गीत मे —

गाम नगर पुरि विहरी महीयलइ, पडिबोही जन वृन्दोजी।
सोल छयालइ आया सवतइ, पुरि जालोर मुणिंदोजी ॥५॥

माह बहुल पखि अणसण उच्चरि, आणी नियमन ठामोजी।
. . ... . ॥६॥

आउ पूरी चउदसि दिन भलइ, पहुता तब सुरलोक जी।
थूभ अपूर्व कियउ गुरु तणउ प्रणमीजइ बहुलोक जी ॥७॥

श्री जिनसागरसूरि

श्री धर्मकीर्त्तिकृत जिनसागरसूरि रास मे —
जालउरइ आवइ गच्छराज, बाजित्र वाजइ बहुत दिवाज।
श्री सघ सु वदइ कामिनी, रूपइ जीती सुर भामिनी ॥६३॥
× × × ×
साधु विहारइ पग भरइए, सोवनगिरइ अहिठाण।
श्री सघ उच्छव नितकरइए, अवसरनउ जे जाण ॥९६॥

कवि सुमतिवल्लभ कृत जिनसागरसूरि रास मे —

बीलाडा मइ सघवी कटारियाजी, जइतारण जालोर।
पचियाख पालणपुर भुज सूरतमइजी, दिल्ली नइ लाहोर ॥६॥

कविवर समयसुन्दरोपाध्याय कृत जिनसागरसूरि अष्टक मे—

"श्री जावालपुरे च योधनगरे श्री नागपुर्यां पुनः
श्री मल्लाभपुरे च वीरमपुरे, श्री सत्यपुर्यामपि ॥"

श्री जिनरत्नसूरि

ये श्री जिनराजसूरि के पट्टधर थे। श्री जिनरत्नसूरि निर्वाण रास मे इनके जालोर पधारने पर सेठ पीथा द्वारा प्रवेशोत्सव कराये जाने का उल्लेख इस प्रकार है —

सोवनगिरि श्रीसघ आग्रहि, आविया गणधार रे।
पइसारउछव सबल कीधउ सी (से)ठ पीथइ सार रे ॥३॥

सघ नइ वदावि सुपरइ, पूज्यजी पटधार रे।
विचरता मरुधर देश मांहे, साधु नइ परिवार रे ॥४॥

ज्ञानमूर्त्ति—स० १६८८ मे खरतर गच्छीय श्री ज्ञानमूर्त्ति मुनि जालोर मे विचरे थे और मिती फाल्गुन शुक्ल १४ को जिनराजसूरि कृत शालिभद्र चौपाई की प्रति लिखी जो पत्र २४ की प्रति सूरत के वकील डाह्याभाई के सग्रह मे है।

युग प्रधानाचार्य गुर्वावली के व्यवस्थित वर्णन मे हम देख चुके हैं कि जालोर के मन्त्री, श्रेष्ठि आदि सैकडो वैराग्य रजित धर्मात्माओ ने भागवती दीक्षा स्वीकार की है और यहां के सघ ने तदुपलक्ष मे महोत्सव आयोजित कर अपनी चपला लक्ष्मी का उन्मुक्त सदुपयोग किया है। उसके पश्चात् इतिहास अप्राप्त है पर इतना तो सहज ही माना जा सकता है कि यह परम्परा अवश्य ही चालू रही है। जयपुर वाले श्री पूज्यो के दफ्तर मे जालोर में जो साधु-यतिजन की दीक्षाओ का उल्लेख है उसे यहां उद्धृत किया जाता है—

श्री जिनसुखसूरिजी ने स० १७७० माघ बदि १२ को जालोर मे प० कर्मचन्द्र को दीक्षा देकर प० कीर्तिजय नाम से प० दयासार के शिष्य रुप मे प्रसिद्ध किया था।

श्री जिनभक्तिसूरिजी ने स० १७९३ मिती पोष सुदि १५ बुधवार के दिन जालोर मे "सौभाग्य" नन्दि (नामान्त पद) प्रवत्तित कर निम्नोक्त ७ दीक्षा देकर भिन्न-भिन्न उपाध्याय, वाचकादि के शिष्य रूप मे प्रसिद्ध किये थे—

दीक्षार्थी	दीक्षानाम	गुरुनाम
प० कुशलो	कुशलसौभाग्य	वा० अमरमूर्त्ति
प० हीरो	हितसौभाग्य	प० जयसुख
प० यशो	युक्तिसौभाग्य	प० अभयराज
प० लालो	लक्ष्मीसौभाग्य	उ० क्षमाप्रमोद
प० आत्माराम	अभयसौभाग्य	प० अभयसुन्दर
प० कानो	कनकसौभाग्य	प० हेमविजय
प० जयकरण	जगतसौभाग्य	प० अभयराज

इसी 'नदि' मे भादवा सुदि २ को प० हेमा को दीक्षित कर हर्षसौभाग्य नाम से प० चारित्रहस के शिष्य रूप मे प्रसिद्ध किया था ।

श्री पूज्य श्री जिनमहेन्द्रसूरिजी ने स० १९०२ मे जालोर मे निम्नोक्त ३ दीक्षाए दी ।

प० शोभाचन्द	सुखकीर्त्ति	म० श्री हितप्रमोद गणे पौत्र	(क्षेम शाखा)
प० श्रीचन्द	सदाकीर्त्ति	,,	,,
प० विरधो	विनयकीर्त्ति	,,	,,

श्री पूज्य श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने स० १९७७ चैत्रकृष्ण ९ शुक्रवार को जालोर दुर्ग मे प० वीरा को दीक्षा देकर प० विवेकरत्न मुनि नाम से क्षेम शाखा के प० प्र० पुण्यराज गणि के शिष्य और प० उदयलाभ गणि के प्रशिष्य रूप मे प्रसिद्ध किया था । इन दोनो श्री पूज्यो के उपर्युक्त दीक्षा विवरण से ज्ञात होता है कि जालोर मे उनके आदेशी क्षेमशाखा के यतिजन रहते थे ।

इसी प्रकार खरतर गच्छ की आचार्य शाखा मे स० १७७४ मिति पोष सुदि १३ को जालोर मे प० जग्गा को दीक्षित कर प० विनयशील नाम से प्रसिद्ध किये जाने का उल्लेख मिला है ।

श्री जिनहर्षसूरि

स० १८६३ का चौमासा श्री जिनहर्षसूरिजी ने जालोर मे किया था । श्री पूज्यजी के दफ्तर मे खानपुरा आदि मुहल्लो के अधिवासी लूणिया, डोसी,

पारख, बछावत, सेठिया मोदी, सखवालेचा गोत्रीय कितने तत्कालीन श्रावको के नाम भी हैं।

इसी वर्ष फाल्गुन सुदि १२ के श्री गौडी पार्श्वनाथ जिनालय (जालोर दुर्ग) के अभिलेख मे महाराजाधिराज मानसिंह और महाराजकुमार छत्र सिंह के विजय राज्य मे वन्दा मुहता अखयचन्द्र लक्ष्मीचन्द, द्वारा प्रासाद निर्माण और भट्टारक श्री जिनहर्षसूरिजी द्वारा प्रतिष्ठित होने का उल्लेख है।

युग प्रधानाचार्य गुर्वावलो के विशद वर्णन में हम देख चुके हैं कि जालोर स्वर्णगिरि मे अनेक बार मन्दिरो, देहरियो, प्रतिमाओ आदि की सैकडो की सख्या मे प्रतिष्ठा हुई है। यहाँ प्रारम्भ से ही खरतर गच्छ का प्रभाव सर्वाधिक रहा है। प्राचीन साहित्य मे जालोर को विधिमार्ग रूपी कमल का सरोवर बतलाया गया है। यहाँ श्री जिनेश्वरसूरि, श्री जिनप्रबोधसूरि आदि अनेक महान् पूज्य पुरुषो का स्वर्गवास हुआ है और उनकी प्रतिमाए, स्तूप-चरण आदि की प्रतिष्ठाए हुई जिनका वर्णन हम आगे कर चुके हैं। काल की कराल गति से स्वर्णगिरि की हजारो इमारतें, बहुत से प्राचीनतम मन्दिरादि ध्वस्त कर भूमिसात् कर दिए गए जिनका नाम निशान भी नही रहा तो उन सबका अस्तित्व समाप्त होना स्वाभाविक था। सतरहवी शताब्दी से फिर स्वर्णगिरि के मन्दिरो का जीर्णोद्धारादि हुआ और उनके चरण-स्तूपादि स्थापित हुए। सतरहवी शताब्दी मे यहाँ दादा साहब के स्तूप चरणादि होने के उल्लेख फिर मिलते हैं। आज खरतरावास के मन्दिर मे दादा साहब के चरण-छतरी है। स्वतत्र दादावाडी की खोज आवश्यक है जिसका अस्तित्व निम्नोक्त प्रमाणो से सिद्ध होता है।

१ राजसमुद्र कृत स्तवन मे स्वर्णगिरि पर दादा स्तुभ का उल्लेख—

जी हो वीरमपुर सोवनगिरे दादा योधपुरे विलसंत।

२ राजसागर कृत गा० ९ के दादा स्तवन मे—

अरे लाल जोधपुरै नै मेडतै जैतारण ने नागोर रे लाल।
सोजत नै पालीपुरे, जालोर श्री साचोर रे लाल ॥४॥

३ राजहर्ष कृत श्री जिनकुशल सूरि अष्टोत्तर शत स्थाने स्थुभ नाम गर्भित स्तवन में—

"सोवनगिरि मडण सीरोही, नूतनपुरनित चढतउ नूर"

४ अभयसोम कृत जिनकुशलसूरि छद मे—

"जालोर जेति सिघरी, खमाइते खराखरी"

५. उदयहर्ष कृत स्तवन मे—

"जी हो साचोरे सोभा धरें, जालोरे जस वास"

६. खुश्याल कृत दादा साहब के ७९ गाथा के छद (स० १८२३) मे—

पूजत थुंभ पाटलं खभायतं सुपाव ए
जालोर सेतराव मे जपत चित्त चाव ए

७ उ० क्षमाकल्याणजी कृत श्री जिनकुशलसूरि वृहत्स्तोत्र (गा० २२) मे—

श्री युक्ते जेसलाद्रौ प्रवर जिनगृहे पत्तने लौद्रवाख्ये।
सेत्रावे कोट्टडे वा विदित पुरवरे चारु बीकादिनेरे।
मूलत्राणे मरोट्टे गिरि विषमपुरे बाहडाद्ये च मेरौ।
जालोरे पुष्करिण्यां वर महिमपुरे श्री फलार्द्धिकायाम् ॥१४॥

८ अमरसिन्धुर कृत दादाजी छद (गा० ६५) मे—

लुलि नै पाय लागत लाहोर, जागती जोत गुरु जालोर।

अंचल गच्छ

मेरुतुगसूरिजी ने लघुशतपदी की प्रशस्ति मे लिखा है कि जब अशाता के कारणवश आचार्य श्री महेन्द्रसिंह तिमिरवाटक मे विराजते थे, तब जालोर का सघ वन्दनार्थ आया। आचार्य श्री ने एक ही व्याख्यान मे उनके ८२ प्रश्नो का एव एकान्त मे उनके दो प्रश्नो का समाधान कर दिया।

श्री अजितदेवसूरि को स० १३१६ मे जावालिपुर-स्वर्ण गिरि मे गच्छनायक पद पर प्रतिष्ठित किया गया। सघ के आग्रह से उन्होने वही चातुर्मास किया फिर पत्तन पधार कर अपने १५ शिष्यो को उपाध्याय पद दिया।

आचार्य अजितसिंहसूरि जब जालोर में थे उस समय अनेक स्थानो से उन्हे वन्दनार्थ सघ आया करता। सघ के सभी लोग तत्कालीन राजा समरसिंह से साक्षात्कार करते और उनके समक्ष भेंट नजराना अवश्य रखते। राजा उन लोगो के मुंह से गुरु महाराज के विषय मे त्याग तपस्या की बहुत कुछ जानकारी प्राप्त करता और प्रभावित हो कर धर्म-देशना श्रवण करने आता और फल स्वरूप जैन धर्म को स्वीकार कर अपने देश में अमारि उद्घोषणा कराता रहता। राजा के अनुकरण मे सभी वर्ण के लोग जैन धर्म का आचार पालन करने लगे। मेरुतुगसूरिजी लिखते हैं कि नमस्कार-स्मरणादि प्रवृत्तियो के कारण आज भी शाणादि गाव धर्मक्षेत्र के रूप मे प्रसिद्ध हैं।

श्री धर्मप्रभसूरि—भिन्नमाल से व्यापार हेतु जावालिपुर में आकर बसने वाले सेठ लींवा-वीजलदे माता के ये पुत्र थे। इनका जन्म सं० १३३१ और दीक्षा १३४१ में हुई। ये देवेन्द्रसिंहसूरि के शिष्य थे। श्री देवेन्द्रसिंहसूरि एक बार विचरते हुए जालोर पधारे। राज्य मंत्री लालन नेवाजी ने प्रवेशोत्सव किया। सं० १३४१ का चातुर्मास संघाग्रह से जालोर में हुआ। धर्मचंद्र ने प्रतिबोध पाकर माता-पिता की आज्ञा से जालोर में दीक्षा ली। इनको सं० १३५९ में आचार्य पद मिला। कविवर कान्ह के अनुसार इनका सूरि पद भी जालोर में ही हुआ था।

> सिरि धम्मपहसूरि गुरु, सोनवालि अइ रम्मु,
> लींबाकुलि वीजल उयरे, तेर इगतीसइ जम्मु ॥७९॥
>
> तेर इगतालइ मुनि पवरो, महिम महोदधि सार,
> अगुणसठइ जालउरि हुउ, आचारिज सुविचार ॥८०॥

सं० १४४५ में आचार्य पद पाने वाले आचार्य मेरुतुंगसूरिजी के विहार वर्णन में उनके जालोर में विचरने का भी उल्लेख आया है। चक्रेश्वरी देवी की सूचना से दिल्ली पर भावी संकट जान कर मेरुतुंगसूरि की आज्ञा से दिल्ली छोड़ कर आने वाले श्रावकों में देवानंद शिखा गोत्र के श्रावक जालोर आकर बसे थे।

अचलगच्छ दिग्दर्शन में गोत्र परिचय के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा है—

सं० ७१३ में जालोर के सोनगिरा चौहान वंश का नान्हड़ देव नामक सोलंकी राजपूत राज्य करता था। [illegible] आचार्य के उपदेश से उसने जैन धर्म स्वीकार किया और जालोर में चन्द्रप्रभ स्वामी का जिनालय निर्माण करवाया, उसके वंशजों ने जैन धर्म की बड़ी सेवाएं की और [illegible] गोत्र हुआ [पृ० ८८]

हुआ और खेमराज ने जालोर आकर राजा कान्हडदे का प्रीतिपात्र बन कर सायला आदि ४८ गाव प्राप्त किए। उसके वशज बाद मे स्याल नाम से प्रसिद्ध हुए।

स० १२६५ मे धर्मघोषसूरि जालोर पधारे तब चौहान वश के भीम नामक क्षत्रिय ने जैन धर्म स्वीकार किया। ओसवाल जाति मे उसका गोत्र चौहान प्रसिद्ध हुआ। जालोर नरेश ने भीम को डोड गाव दिया जिससे वह डोड गाँव मे आकर डोडियालेचा कहलाया। धर्मघोषसूरि के उपदेश से उसने वासुपूज्य जिनालय कराया। इसी वश के वीरा सेठ ने जालोर मे चन्द्रप्रभ प्रासाद बनवाया था। स० १२६६ मे डोड गाव के मन्दिर की प्रतिष्ठा धर्मघोषसूरि ने की। डोडियालेचा के सिवा गोवाउत, सुवर्णगिरा, सघवी, पालनपुरा और सेघलोरा भी इसी गोत्र से सम्बन्धित है।

कविवर कान्ह ने गच्छनायक गुरु रास मे लिखा है कि धर्मघोषसूरि ने वील्ह आदि को प्रतिबोध दिया। यत —

"जालउरि पडिबोहिय बील्ह पमुहो गणहरि धम्मघोषसूरि"

इससे ज्ञात होता है कि उन्होने जालोर मे अनेको को प्रतिबोध दिया था।

लाखण भालाणी गाँव के परमार रणमल के पुत्र हरिया को सर्प दश से विष मुक्त करके जीवनदान देने वाले धर्मघोषसूरि से प्रतिबोध पाकर हरियासाह जैन हुए जिनको स० १२६६ मे जालोर और भिन्नमाल के श्रावको ने ओसवाल जाति मे मिला लिया।

भट्ट ग्रन्थो मे उल्लेख है कि कान्हडदेव के शासनकाल मे महेन्द्रसिहसूरि ने भीम चौहान को बोध दिया। भावसागरसूरि ने उसे 'भीम नरेन्द्र' सज्ञा से पुकारा है यत —

"सिरिपास भवण मज्झे भीम नरिंदेण कहिय पास थुइ"

ओसवाल वश, के चौहान गोत्रीय वीरा सेठ ने जालोर मे चन्द्रप्रभ जिनालय बनवाया (पृ० २६९) वाहणी गोत्रीय ओसवाल वरजाग ने जालोरी, साचोरी राडद्रही, सीरोही चार देशो को जिमाया इसी वश के कर्मा ने जालोर मे धर्म कार्यों मे प्रचुर द्रव्य व्यय किया।

स० १७०० मे आचार्य श्री कल्याणसागरसूरि जालोर पधारे। चडीसर गोत्रीय सेलोत जोगा मत्री ने महामहोत्सव पूर्वक नगर प्रवेश कराया। आचार्य श्री ने मत्र प्रभाव से महामारी रोग दूर किया। अन्य दर्शनी लोगो ने भी सम्यक्त्व स्वीकार किया। स० १७०० का चातुर्मास जालोर हुआ।

तपागच्छ

उदयपुर के शीतलनाथ जिनालय स्थित धर्मनाथ प्रतिमा के अभिलेख से विदित होता है कि जालोर में श्री लक्ष्मीसागरसूरिजी ने इसकी स० १५४२ मे प्रतिष्ठा कराई थी। यह बिब प्राग्वाट कुटुम्व द्वारा निर्मापित है इसका निम्न लेख नाहरजी के लेखाङ्क ११०० मे व श्री विजयधर्मसूरिजी के लेखाङ्क ४८१ मे छपा है।

स० १५४२ वर्षे फा० ब० २ दिने जालउर महादुर्गे प्राग्वाट ज्ञातीय सा० पोष भा० पोमादे पुत्र सा० जेसाकेन भा० जसमादे भ्राता लाखादि कुटु व युतेन स्व श्रेयोऽर्थं श्री धर्मनाथ बिबकारित प्र० तपा० श्री सोमसुन्दरसूरि सताने विजय मान श्री लक्ष्मीसागर सूरिभि ॥ श्रियोस्तु ॥

जहागीर बादशाह का फरमान लेकर जव मुकरवखान गुजरात जा रहा था तो जब वह रास्ते मे जालोर पहुचा तो उपाध्याय श्री भानुचदजी उससे जाकर मिले और श्री सिद्धिचदजी को उसके साथ अहमदाबाद भेजा (जैन सत्य प्रकाश वर्ष ५ पृ० २१७)।

विजयसिहसूरि विजय प्रकाश रास मे जालोर को मारवाड के ९ कोटो मे तीसरा कोट वतलाया है—

"बीजो अर्बुद गढ ते जाण्यो, त्रीजउ गढ जालोर वखाण्यो ॥२७॥

जब आचार्य महाराज वरकाणा तीर्थ पधारे तब जालोर का सघ उन्हे वन्दनार्थ गया था यत—

जगम थावर तीर्थ दोइ मिलिया वरकाणइ।
जालोरउ सघ वदवा आव्यो जग जाणइ ॥८८॥

जालोर नगर के तपावास स्थित श्री नेमिनाथ जिनालय मे स० १६६५ मे प्रतिष्ठित जगद्गुरु श्री हीरविजयसूरिजी महाराज की सुन्दर प्रतिमा है।

स० १६५१ मे नर्गाष गणि कृत 'जालुर नगर पच जिनालय चैत्य परिपाटी' मे जालोर के ५ जिनालयो की बिब सख्या अवश्य दी है पर स्वर्णगिरि के मन्दिरो का कोई उल्लेख नही है अत उस समय वे मन्दिर भग्न दशा मे या खाली दशा मे होगे। जहाँगीर के समय मे महाराजा गर्जासह राठौड और उनके मत्री मुहणोत जयमलजी हुए। मुहणोतजी ने स्वर्णगिरि पर जिनालय वनवा कर प्रतिष्ठा करवाई और अन्य मन्दिरो का जीर्णोद्धार भी करवाया। स० १६८१ मे तपा-गच्छीय आचार्य श्री विजयदेवसूरिजी के आज्ञानुवर्त्ती मुनि जयसागर गणि द्वारा प्रतिष्ठा कराये जाने के अभिलेख विद्यमान है। कुछ प्रतिमाओ पर मुहणोतो के अतिरिक्त कावेडिया-कोठारी, चोरवेडिया आदि के भी लेख पाये जाते हैं।

मुनि श्री कल्याणविजयजी सम्पादित "श्री तीर्थ माला सग्रह" नामक पुस्तक मे कवि जससोम रचित मेडता से शत्रु जय तीर्थ मार्ग चैत्य परिपाटी प्रकाशित है जिसमे स० १६८६ का निम्न उल्लेख है। इस समय स्वर्णगिरि के महावीर स्वामी के जिनालय के जीर्णोद्धारित हो जाने से उसका भी उल्लेख है।

> शुभ मुहूर्त्त शकुन प्रमाण, पहिलुं हिव कीध प्रयाण।
> सघ मिलिउ बहु समेलो, जालोर थयो सहु भेलो ॥८॥
>
> पूज्या तिहा पच विहारि, जिन फाग रमइ नर नारि।
> सोवनगिरि वीर जुहार्या, भव पातक दूर निवार्या ॥९॥

महोपाध्याय विनयविजय कृत इन्दु दूत-विज्ञप्ति पत्र (पद्य १३१ व गद्य) मे जोधपुर से सूरत के मार्ग में सुवर्णाचल का वर्णन ६ श्लोको मे किया है। इसमे जालोर को जालधरपुर लिखा है तथा सीरोही को श्रीरोहिणी लिखा है। इसमे स्वर्णगिरि पर महावीर, पार्श्वनाथ के जिनालयो का ही उल्लेख है। यत —

> तस्मिन् शैलेऽन्तिम जिनवरा वाम वामेय देव,
> प्रासादो यौ तरुण किरणै· सगर निर्मिमाते।
> मध्यस्थ सन् सुघटित रुची तौ कुरु प्रायशो यत्,
> प्रोत्तुगानां भवति महतै वाप ने यो विरोध ॥३५॥
>
> तत्र क्रीडोपवन सरसी स्वच्छ नीरान्तरेषु,
> स्नात्वा स्वैर प्रतिकृति मिषान्तव्य धौताशुक. सन्।
> ज्योत्स्ना जालैः स्नपय मधुरै र्वीर वामेय देवौ,
> कर्पूराच्छैस्तदनु च करै रर्जयाभ्यर्च्य पुण्यम् ॥३६॥

तस्या धस्तान्नगर मपर स्वर्ग एवास्तियस्य,
प्रौढेभ्याना भवन निकरं र्ध्वस्तमाना विमाना ।
क्वाप्येकान्ते कृत वसतय सज्जलज्जाभिभूता,
भूमी पीठा वतरण विधौ पङ्गुता माश्रयन्ति ।।३७।।

पट्टावली समुच्चय मे लिखा है कि जोधपुर नरेश के मुख्य मान्य जयमल्ल ने स० १६८१ चातुर्मास के बाद श्री विजयदेवसूरिजी को सिरोही से जालोर बुलाकर उपरा ऊपरी तीन चौमासे कराके अपने बनवाये हुए सुवर्णगिरि के चैत्यो की प्रतिष्ठा करवायी । स० १६८४ पो० सु० ६ को गणानुज्ञा का नदि महोत्सवादि किया ।

श्री विजयसिंहसूरिजी ने स० १७०४ में जैतारण चातुर्मास कर अहमदाबाद जाते हुए मार्ग में स्वणगिरि तीर्थ की यात्रा की ।

स० १६८६ प्रथम आषाढ़ वदि ५ को मत्री जयमल्लजी ने जालोर में प्रतिष्ठा कराई थी । श्री पद्मप्रभस्वामी की प्रतिमा नाडोल के रायविहार में स्थापित की जिसका लेख जिनविजयजी के प्राचीन जैन लेख सग्रह के लेखाक ३६७ में प्रकाशित है ।

जालोरी गच्छ

जालोर के प्राचीन नामो में जाल्योद्धर-जाल्लोधर भी पाया जाता है । जैन साहित्य सशोधक वर्ष ३ अक १ में चौरासी गच्छो के नामो की दो सूचिया छपी है जिनमें एक जालोरी गच्छ भी है । नगरो के नाम से अनेक गच्छ और जाति-गोत्र पाये जाते हैं उसी प्रकार इस प्राचीन और महत्वपूर्ण स्थान के नाम से प्रसिद्ध गच्छ के कतिपय प्रतिमा लेख पाये जाते हैं । यहाँ उन लेखो को उद्धृत किया जाता है—

१ १ स० १३३१ मोढ ज्ञातीय परी० महणाकेन निज माता [illegible] देवि श्रेयोऽर्थं श्री पार्श्व बिम्ब कारित ।। प्रतिष्ठित श्री जाल्योधर गच्छे श्री हरि प्रभसूरिभि [प्राचीन जैन लेख संग्रह नं० [illegible]]

२. ६०।। सवत् १३४९ वर्षे चैत्र वदि ६ [illegible] सुत परी० तिहुणाकेन भ्रातृ महणा श्रेयोऽर्थं श्री महावीर बिंबं कारितं ।। प्रतिष्ठित श्री जोल्योधर गच्छे श्री देवसूरि संताने श्री हरिभद्रसूरि शिष्यैः श्री हरिप्रभसूरिभि शुभमवतु [प्रा० जै० ले० सं० [illegible]]

३. स० १३९ वैशाख सुदी ३ मोढ वशे श्रे० पाजान्वये व्य० देवा सुत व्य० मु जाल भार्यया व्य० रत्नविव्या आत्म श्रेयोर्थ श्री नेमिनाथ बिंब कारित श्री जाल्योद्धर गच्छे श्री सर्वाणदसूरि सताने श्री देवसूरि पट्टभूषणमणि प्रभु श्री हरिभद्रसूरि शिष्यैः सुविहित नामधेय भट्टारक श्री चन्द्रसिंहसूरि पट्टालकरण श्री विबुधप्रभसूरीणां श्री पाजावसहिकाया भद्र भवतु ।

[प्राचीन लेख स० ले० ६७]

४. स० १४२३ वर्षे फा० सु० ९ मोढ ज्ञातीय श्रे० गणा भा० व० लाडो सुतसामलेन मा० पितृ० श्रे० श्री शातिनाथ बिं० का० प्र० जाल्योधर ग० प्र० श्री ललितप्रभसूरिभि. [प्रा० ले० स० ले० ७६]

५. स० १५०३ वर्षे माघ सुदि १४ सोमे कुमारदेव्या सुपुण्याय श्री पार्श्वनाथ बिंब कारित श्री जाल्लोधर गच्छे भद्ररत्नसूरि माणिक्यसूरिभि॰ शिष्यैः प्रतिष्ठित [जैन धातु प्रतिमा ले० ९९]

६. श्री जालोहरीय गच्छे श्री वच्छ सुत निमित शातन णेनकारिता ।

[प्रतिष्ठा लेख सग्रह ले० २३]

७. ९।। स० १३३१ वर्षे बैशाख सुदि १५ बुधे जाल्योधर गच्छे मोढ वशे श्रे० यशोपाल सुत ठ० पूनाकेन मातृ माल्हाण श्रेयोर्थं विमलनाथ बिंब कारित प्रतिष्ठितं श्री हरिप्रभसूरिभि. [प्राचीन जैन लेख सग्रह न० ४९८]

इन लेखो मे चार लेखो में प्रतिमा निर्मापक मोढ ज्ञाति के थे, दो मे निर्देश नही है। किन्तु देवसूरि सतानीय उल्लेख होने से सभवत वृहद् गच्छीय वादीन्द्र देवसूरि की पट्ट परम्परा ही आगे चल कर जालोरी गच्छ नाम से प्रसिद्ध हो गई मालुम देती है। तोपखाने मे स्थित कुमरविहार के अभिलेख में इन्हीं देवसूरि सतानीय आचार्यों को मन्दिर की व्यवस्था से सम्बन्धित नियुक्त किया गया था, स्पष्ट उल्लेख है, पट्ट परम्परादि अन्वेषणीय है इनकी नियुक्ति महाराज समरसिंह के आदेश से हुई थी।

नाणकीय गच्छ

स० १३२० और स० १३२३ के अभिलेखो से विदित होता है कि चदन विहार नामक महावीर जिनालय इस गच्छ से सम्बन्धित था और वह महाराज चदन के समय का निर्मित होगा। आचार्य धनेश्वरसूरि के विद्यमानता मे तेलहरा गोत्रीय श्रावक इस गच्छ के अनुयायी थे।

साधु पूर्णिमा गच्छ

जालोर मे सभी गच्छो के आचार्यों का आवागमन और मान्यता थी। उन आचार्यों द्वारा प्रतिष्ठित प्रतिमा लेखो से यह चारु तया प्रमाणित है। बीकानेर के पार्श्वनाथ जिनालय (कोचरो का चौक) की एक चन्द्रप्रभ चौवीसी प्रतिमा स० १५०८ मे स्वर्णगिरि पर प्रतिष्ठित है जिसका निर्माण जालोर के श्रीवत्स गोत्रीय ओसवाल वश द्वारा हुआ था। प्रस्तुत अभिलेख यहाँ दिया जा रहा है—

स० १५०८ वर्षे ज्येष्ठ सुदि ५ रवौ अद्येह स्वर्णगिरौ जाल्योद्धर वास्तव्य श्री ऊकेश वशे श्रीवत्स गोत्रीय प० देवा भा० देवलदे तत्पुत्र स० वावाल्य तद्भार्या विल्हणदे भ्रातृ देवसिंह पुत्र जागा भार्या कपूरीति कुटुब युत. श्री चन्द्रप्रभस्य बिंब स चतुर्विंशति जिनमची करत श्री साधु पूर्णिमा पक्षे श्री रामचन्द्रसूरि पट्टे परमगुरु भट्टारक श्री पुण्यचद्रसूरीणामुपदेशेन विधिना श्राद्धै मगलभूयात् श्रमण सघस्य। [बीकानेर जैन लेख सग्रह न० १६२५]

सुराणा गच्छ

सवत् १५५४ व० पौष व० २ बुधे सुराणा गोत्रे सा० [illegible]चा भा० [illegible]ती पु० मेघा भा० रगी पु० सूर्यमल्ल स्वपुण्यार्थं श्री वासुपूज्य बिंब कारित प्र० सुराणा गच्छे श्री पद्माणदसूरि पट्टे श्रीनदिवर्द्धनसूरिभि [illegible] वास्तव्य।

[बी० जै० ले० स० न० ११२३]

नागपुरी तपा (पायचद गच्छ)

६६ विवेकचन्द्रसूरि—जालोर के [illegible] मंत्री सा० [illegible]चद पिता और महिमादे माता की कोख से स० १८०९ मे इनका जन्म हुआ। स० १८२० नागौर मे दीक्षा और आचार्य पद स० १८३० मिति आश्विन सुदि २ को वीरम गांव मे एव भट्टारक पद माघ सुदी ५ को हुआ। स० १८५४ श्रा० व० १३ को उज्जैन मे स्वर्गवासी हुए।

उपकेश गच्छ

देवगुप्तसूरि के शिष्य वीरचंद जी ज्ञान, छंद, मंत्र शास्त्र आदि में बड़े प्रवीण थे। जावालिपुर में [illegible] के नाम का [illegible] किया होगे देव सूरि जी से कहा—आज से २१वें दिन तेरे (मठ के) [illegible] करोगे। वचन सत्य हुआ और [illegible] वह वीरचंद जी आठ शास्त्रों का (अष्टाङ्ग निमित्त) पढ़ित और [illegible] गया और भविष्यवाणी सत्य हुई।

वड़ गच्छ

राजस्थान शोध सस्थान, चौपासनी के ग्रन्थाङ्क २०५ (७) मे करमप्रभसूरि कृत बड गच्छ परम्परा स्तवन मे श्री जयमगल सूरि द्वारा जालोर मे वर्द्धमान स्वामी के स्थापन करने का उल्लेख इस प्रकार है—

> वर्द्धमान जिणि थापिया ए, सिरि जालोर मझारे।
> जुगप्रधान वडु सहिय, श्रीजय मगल सूरे ॥८॥

नागोरी लुंका

पट्टावली प्रबन्ध सग्रह मे आचार्य हस्तीमल्ल जी ने लुका शाह और पूज्य रूपचद जी के सम्बन्ध मे लिखा है—

" · इधर किसी पौषधशालिको ने भूमिघर मे स्थित सिद्धान्त ग्रन्थो को गलता हुआ जान कर जालोर निवासी लुका नाम के लेखक को बुलाकर उसे एकान्त मे रख कर पुस्तक लेखन करवाया। × × "बाद लुका साह ने जालोर नगर से सभी आगम लिख कर रूपचद जी के पास भेज दिए × × जालोर मे कोचर वशीय वेलावत, कालू निवासी भडारी, जेसलमेर मे वोहरावशी, कृष्णगढ मे वाघचार, चण्डालिया चौधर अनेक जाति के ओकेश वशीय (ओसवाल) और अग्रवाल भी नागोरी लुका गच्छी हो गए। इस तरह एक लाख अस्सी हजार घर को उन्होने प्रतिबोध दिया।

प्राग्वाट धणदेव की वंश परम्परा

श्री सघ के भडार, पाटण की श्री शान्तिनाथ चरित्र की ताडपत्रीय प्रति जो चौदहवी शती की है, श्रीमाल वशी श्राविका सलवणा प्रदत्त है इसमे ५-६ प्रशस्तिया है एक मे जालोर का नाम जाल्योधर लिखा है।

पाटण भडार सूची (पृ० ३४४) में धर्म विधि वृत्ति की वस्त्र पर लिखी प्रति है जिसकी दाता की प्रशस्ति से विदित होता है कि स० १४१८ के लिखे इस ग्रन्थ को श्री रत्नप्रभसूरि ने वाचा था। प्रशस्ति यह है —

जावालि दुर्गे नगरे प्रधाने बभूव पूर्वं धणदेव नामा।
सहजल्हदेवि दयिता तदीया ब्रह्माक लिंबा तनयौ च तस्या ॥१॥

गौरदेवि दयिता प्रबभूव लिंबकस्य तनयः कडुसिंह।
तस्य च प्रियतमा कडुदेवी तस्य चैव समभूद् धरणाक. ॥२॥

ब्रह्माक पुत प्रबभूव झझण प्राग्वाट वशस्य शिरोमणिस्तु।
आशाधरस्तस्य बभूव नदन पुत्रश्च तस्य प्रबभूव गोगिल. ॥३॥

गोगिलस्य तनय प्रवभूव पद्मदेव सुकृती सुकृतज्ञ।
तस्य चैव दयिता सुर लक्ष्मी जैन धर्म करणैक कोविदा ॥४॥

अमी जयति तनया यस्याश्च जगती तले।
सुभटसिंह क्षेमसिंह स्थिरपालस्तथैव च ॥५॥

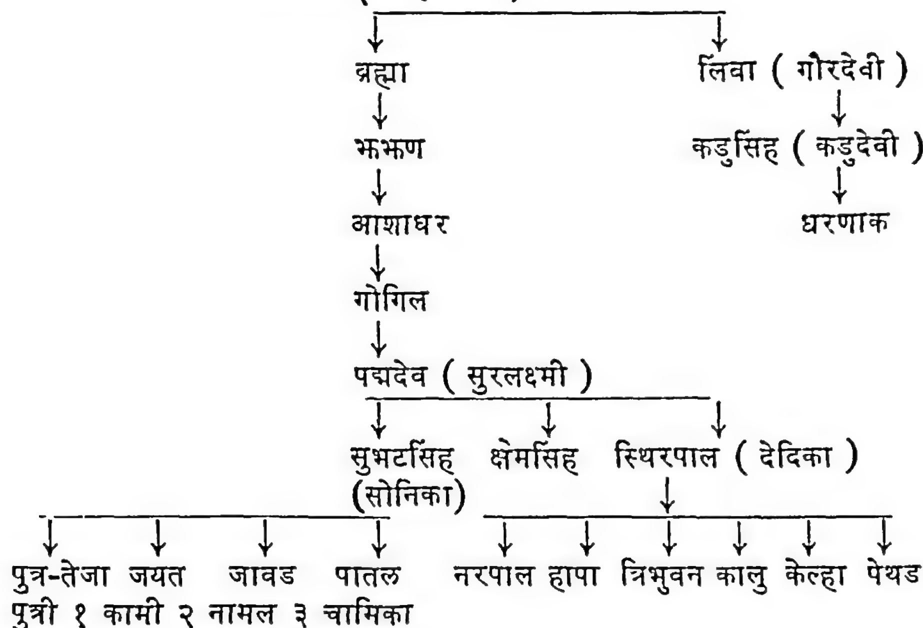
जाया सुभटसिंहस्य सोनिका हेम वर्णिका।
तस्या सुता जयन्त्युच्चै रेते विदत विक्रमाः ॥६॥

तेजाको जयतश्चैव ना(जा)वड पातलस्तथा।
एता पुत्र्यश्च यस्या हि कामी नामल चामिका ॥७॥

जाया स्थविरपालस्य श्राविका देदिकाभिधा।
तस्या सुता पडेते च जयती जगती तले ॥८॥

नरपालश्च हापाक स्त्रिभुवनस्तु कालुक· ।
केल्हाक पेथड श्चैव षडेते सुर सुन्दरा ॥९॥

स्थविरपालस्य साहाज्जा (य्या) त् श्री रत्नप्रभसूरिभि ।
विशालाया धर्मविधे· पुस्तक वाचित वरम् ॥१०॥छ ॥



इस प्रशस्ति से प्राग्वाट वशी स्थिरपाल का वशवृक्ष इस प्रकार वनता है, ये जावालिपुर वासी थे ।

जालोर के मंत्री आभू, अभयद और अंबड़

माण्डवगढ के सुप्रसिद्ध विद्वान और साहित्यकार मत्री मण्डन और धनदराज आदि ने केवल माण्डवगढ मालवा मे ही नही अपनी सत्प्रवृत्तियो द्वारा उनके व उनके पूर्वजो की महान् सेवाओ का उल्लेख उनकी प्रशस्तियो आदि मे पाया जाता है। उनका गोत्र सोनिगिरा—श्रीमाल वश जालोर—सुवर्णगिरि से ही सम्बन्धित था। जालोर मे उनके पूर्वजो की सेवाओ का उल्लेख कवि महेश्वर कृत 'काव्य मनोहर' महाकाव्य के सप्तम सर्ग में इस प्रकार है—

यदुद्भवा. पुण्यधियो महान्त कीर्त्यञ्चिता जीवदया कुलाङ्का ।
नन्दन्ति जन्याः स तु लोक मध्ये श्रीमाल वशो जयति प्रकामम् ॥२॥

गोत्रे स्वर्णगिरीयके समभव ज्जावाल सत्पत्तने,
ह्याभूरित्यभिधान भृन्मतिमता वर्य प्रधानेश्वरा ।
श्री सोमेश्वर भूभुजः प्रतिदिन यातोन्नति ख्याति ते,
व्यापारे निखिले सुकीर्त्ति विमले लोकोत्सवालङ्कृते ॥३॥

तस्यात्मजस्त्वभयदो ऽभवदत्र वशे ह्यानदनाम नृपते सकल प्रधानम् ।
चातुर्य निर्मल गुणोत्तम कर्मकीर्त्ति सद्दायकौघ सततामित दत्तभूति ॥४॥

यो गूर्ज्जरान्नृपवराद्विजय श्रियंवै लेभेऽभमित्र इह धैर्य गुणै प्रशस्त ।
जावालनाम्नि नगरे स बभूववर्ये श्रीमन्निकेतन विभासित दिग्विभागे ॥५॥

तस्माद भू वम्बड़ नाम धेय. स्व विक्रमै स्तर्जित वैरिवर्ग. ।
यो ऽरोपयत्स्वर्णगिरौ गरिष्ठे राजन्य वर्ये वर विग्रहेशम् ॥६॥

अर्थात्—श्रीमाल वश के स्वर्णगिरीयक (सोनगरा) गोत्र मे जावालपत्तन (जालोर) मे आभू नामक प्रतापी पूर्वज हुआ वह बुद्धिमान था और राजा सोमेश्वर का मुख्य मत्री था। आभू का पुत्र अभयद हुआ जो आनद नामक राजा का मुख्य मत्री था और उसने गूर्जर राज पर विजयश्री प्राप्त की थी। यह जालोर मे प्रसिद्ध हुआ था इसके पुत्र अबड ने सुवर्णगिरि पर विग्रहेश (वीसलदेव) को स्थापित किया।

इसके बाद लिखा है कि उसका पुत्र सहणपाल मोजदीन नृप का मुख्य प्रधान था। उस राजा ने कच्छप तुच्छ (कच्छ ?) देश को घेर लिया तब दुख से रोते हुए लोगो पर दया लाकर सहणपाल ने देश को मुक्त कराया। यवनाधिप ने १०१ तार्क्ष्य और ७ मुद्राओ से मत्री को पुरष्कृत किया। सहणपाल के पुत्र नैणा को सुलतान जलालुद्दीन ने समस्त मुद्राए देकर राज्य का सम्पूर्ण अधिकार सौंपा। उसने कलिकाल केवली श्री जिनचद्रसूरिजी के साथ शत्रु जय-गिरनार तीर्थों की यात्रा की थी।

इस ४७ श्लोको की प्रशस्ति मे और भी अनेक ऐतिहासिक ज्ञातव्य हैं। मण्डन के काव्य चम्पूमण्डन, अलङ्कारमडनादि ग्रन्थो की प्रशस्तियो मे भी ऐतिहासिक तथ्य हैं। यहाँ उपर के श्लोको मे जालोर के सम्बन्धित श्लोको को ही दिया गया है तथा बाद के ५-६ श्लोको का भावार्थ समय निर्द्धारित करने मे सहायक होगा क्योकि इन श्लोको मे जालोर के सोमेश्वर और आनन्द पिता-पुत्र नृपति द्वय के आभू और अभयद के मुख्य मत्री होने का उल्लेख है। ये पन्द्रहवी शताब्दी के प्रामाणिक उल्लेख हैं जिन पर जालोर के इन दोनो शासको पर नया प्रकाश पडता है। ये दोनो राजा सम्भवतः नाडुल के चौहानो—कीर्त्तिपाल और परमार धारावर्ष—वीसल के मध्यवर्त्ती चौहान शासक थे जिनका आगे उल्लेख किया जा चुका है।

"प्रतिष्ठा लेख सग्रह" के लेखाङ्क ३६४ मे सवाई माधोपुर के विमलनाथ जिनालय की पचतीर्थी का लेख प्रकाशित है जो माडवगढ के सुप्रसिद्ध स्वर्णगिरिया वश का है जो इस प्रचार है—

॥ सवत् १५०३ वर्षे वैशाख सु० ५ श० श्रीमालवशे स्वर्गगिरिया गोत्रे सा० चाहड भार्या गौरी सुतस्य स० चद्रस्य स्व पितृव्य भ्रातु पुण्यार्थं स० देहड भा० गागा सुत स० धनराजेन ल० भ्रातृ स० खीमराज स० उदयराजादि युतेन श्री आदिनाथ बिंब कारित श्री खरतर ग० श्री जिनचद्रसूरिभि प्रतिष्ठित नदतात् ॥

टिप्पणी—बिजोलिया के स० १२२६ के शिलालेखानुसार अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज चौहान के पिता सोमेश्वर थे जिनके पूर्वज विग्रहराज ने जायालिपुर (जालोर), पाली और नाडूल को जीत लिया था। अत आभू सोमेश्वर का मुख्य मत्री होगा। आनद का मत्री अभयद बतलाया है यह आनद सोमेश्वर का पुत्र था। विग्रहेश सोमेश्वर का बडा भाई विग्रहराज चतुर्थ—अपर नाम वीशलदेव था। जिसे अभयद के पुत्र अम्बड ने स्थापित किया। अबड का पुत्र सहणपाल जिस मोजदीन का मुख्य मत्री था वह रजिया बेगम का भाई मोइजुदीन-बहराम (स० १२९६-९७ से १२९८-९९) था।

यवनों का अत्याचार—शासनदेव का चमत्कार

मुस्लिम शासनकाल मे देवालयो की जो दुर्गति की गई वह वर्णनातीत है। जालोर-स्वर्णगिरि के वैभवशाली मन्दिरो को भूमिमात् करके सैकडो वर्षो की अर्जित गरिमा को नष्ट करने के साथ-साथ विस्मृति के गर्भ मे न जाने कितने कीर्तिकलाप नेस्तनावूद किए हुए अज्ञात घाव विद्यमान हैं, कल्पना नही की जा सकती। वे दुराशय शासक दुरभिसन्धि से अपने खतरनाक पजे फैलाये रखते और जहा भी मौका लगता अपनी राक्षसी वृत्ति का शिकार उन पावन स्थानो को भी बना लेगे, इतिहास साक्षी है।

जीरावला की घटना

जालोर से जीरावला तीर्थ अनतिदूर है उसकी पवित्रता नष्ट करने के लिए जो किया, उसकी सक्षिप्त झाकी जो मिलती है अविकल उद्धृत् की जाती है।

स० १३६८ मे वे दुष्टात्मा यमदूत की भांति जीरावला तीर्थ जा पहुचे, जैन सत्यप्रकाश वर्ष १९ अक ९ "जीरावला पार्श्वनाथ तीर्थ स्थापना का समय शीर्षक लेख से २०वी गाथा यहाँ दी जाती है—

अह तेरह अडसट्ठा वरसिहि सुरताणीह दल अमरस वरसिहि, उक्करसिहि अइ पुट्ठ।
अण जाणह जालुरह हुता, जीराउलिवेगि पहुता, जमदूत जिम दुट्ठ ॥२०॥

जैन परम्परा के इतिहास पृ० ७२३ मे इसका विशेष खुलासा इस प्रकार है —

एक वार जालोर के मुसलमानो ने तीर्थ को तोडने का विचार किया पर वे सफल न हो सके। इससे ७ शेख-मौलवी लोग जैन यति का वेश धारण कर मन्दिर मे आये। रात्रि मे उन्होंने खून छिडक कर उसे अपवित्र किया और प्रतिमा को तोडकर उसके ९ टुकडे कर डाले। इस दुष्कृत्य से वे वेभान होकर गिर पडे। वाहर न निकल सकने से सुवह मे लोगो ने उन्हे पकड कर मार डाला। इस घटना से सवको दु ख हुआ। सेठ ने उपवास किया तो रात्रि मे देव ने आकर कहा—खेद न करो, जो भावि भाव हो वैसा होता है। अव दरवाजे वन्द कर नौ सेर लापसी वना कर उसमे प्रतिमा के नवो टुकडे दवा कर सात दिन रखो।

श्री सघ ने वैसा ही किया पर सातवे दिन एक छ री पालता सघ आया, जिसके आग्रहवश दरवाजा खोलना पडा। सबने प्रभु दर्शन किये, अग जुड गये पर थोडी रेखाए रह गईं जिससे खड्डे रह गए।

इसी अरसे मे जालोर के सूबेदार के यहाँ भयानक उपद्रव हुआ। उसने दीवान के कथन से जीरावला जाकर भ० पार्श्वनाथ की प्रतिमा के समक्ष शिर मु डा कर माफी मागी, जिससे उन्हे शान्ति हुई। तब से यहा सिर मु डाने की प्रथा चली जो सोलहवी शती तक थी।

भीनमाल की घटना

स० १६५१ मे देवल की ईंट खोदते हुए भिन्नमाल मे श्री पार्श्वप्रभु की प्रतिमा प्रकट हुई। श्री वीर प्रभु का समवशरण तथा सुन्दर प्रतिमा, श्री शारदा की मूर्त्ति आदि ८ मूर्त्तियाँ प्रगट हुई। यत —

ईट खणता देवल भणी ए, प्रगटचा श्री पास।
सवत सोल एकावने, बहु पुगी आस॥८॥
समवशरण श्री वीर नु ए, प्रतिमा सुन्दर सार।
मूरत श्री सारद तणी ए, आठ मूरत अबार॥९॥

[भिन्नमाल पार्श्वस्तवन]

मेहता लक्ष्मण और भावडहरा गच्छ के चतुर्दशी पक्ष के पन्यास आदि यह देख कर अति प्रसन्न हुए। शान्तिनाथ जिनालय मे यह प्रतिमा लाये और स्नात्र-महोत्सव, गीत-गान होने लगे।

उस समय जालोर नगर मे देशपति गजनीखान का राज्य था और उसका सेवक भिन्नमाल मे शासक था। उसने खान को जाकर कहा—साहेब! पीतल का अद्भुत बुतखाना प्रगट हुआ है, वह आप लाओगे तो बहुत सा द्रव्य देंगे। खान ने यह सुनकर तुरन्त इस प्रतिमा को अपने पास मगवा ली और कहने लगा कि आज मुझे बहुत पीतल मिला है, हाथी के लिए घण्ट कराऊ गा। यह बात जब सर्वत्र फैली तो चतुर्विध सघ एकत्र हुआ। गजनीखान के पास जाकर प्रार्थना की। महाजनो ने मान पूर्वक जवाब मागा। उन्होने कहा पीतल का धन हमारे पास लो और बुतखाना छोड दो! बाबा आदम का यह रूप है, इसके बहुत स्वरूप हैं जिसकी सेवा करनी चाहिए, उसे नष्ट कैसे किया जाय? सलाम करके आप पार्श्वनाथ को छोड दें, जिससे सबके मन की आशा पूर्ण हो। हम चार हजार पीरोजी (मुद्रा) दे देंगे।

उस समय गजनीखान ने कहा—लाख रुपये के मामले मे इतने से कैसे छोड़ू ? सघ लौट आया। हृदय मे अत्यन्त दु ख हुआ। हाय ! यह दु ख किससे कहें ? म्लेच्छ से प्रतिमा कैसे लें ? लोगो ने विविध प्रकार के अभिग्रह लिए। उस गाँव मे अति गुणवान सघवी वीरचन्द रहता था, उसने पार्श्वनाथ प्रतिमा छूटे तब तक नियम लिया कि पार्श्वनाथ मूर्ति को पूज करके ही अन्न ग्रहण करूँगा।

इस पर नीले घोड़े पर सवार और नीले वस्त्राभूषण से पार्श्व (यक्ष) धरणेन्द्र पद्मावती के साथ प्रगट हुए और अभिग्रहधारी सेठ से कहा—सेठ ! मेरी बात सुनो, रात-दिन क्यो भूखे मरते हो ? पार्श्वनाथ भगवान की वास्तविक प्रतिमा को तो गजनीखान ने तोड डाला है, अब वह किसी प्रकार नही आ सकती ! तुम इतने लघन क्यो करते हो ? सेठ ने कहा—इस भव मे तो मैंने जो नियम लिया है वही सार है, यदि पार्श्वनाथ प्रतिमा नही आवेगी तो मर जाना ही श्रेयस्कर है !

सेठ का चित्त निश्चल जान कर धरणेन्द्र जालोर गया और गजनीखान से कहा—तुम सोये हो तो जागो ! जल्दी उठकर मेरे पाँव पडो और भिन्नमाल नगर मे मुझे छोडो ! नही तो तुम्हारे पर कलिकाल रुष्ट हुआ—समझना ! जो मैं रुष्ट हुआ तो बुरा होगा और तुष्ट हुआ तो अपार ऋद्धि दू गा, शत्रुओ पर विजय कराऊ गा !

गजनीखान अहकार मे भरकर कहने लगा—अरे बुतखाना ! तू मुझे क्या डराता है ? तुम रुष्ट या तुष्ट होकर मेरा क्या कर सकते हो ? मैं भाग्यबली हूँ, डरने वाले हिन्दू गोबरे, हम तो खुदा के यार हैं। मुल्क मे मुसलमान बड़े हैं, बुतखाने के लिए तो वे कालस्वरूप हैं। मेरी बात सुन लो स्पष्ट, तुम्हारी देह के टुकडे-टुकडे कर डालू गा और गली-गली मे फिराऊ गा। मैं देखू गा कि तुम तुष्ट होकर मुझे क्या दे सकते हो और रुष्ट हो करके क्या ले लोगे ! मेरे सेवक होकर तुम मुझे क्या दोगे ?

गजनीखान ने तत्काल फैसला कर देने का निर्णय कर सिरोही के चार सुनारो को बुलाया और उन्हे कहा—इसको तोडकर टुकडे करो ! जिसमे (निकले हुए सोने) से बीबी के लिए नवसर हार तथा घोडे के गले के लिए घूघरमाल तैयार करो !

आज्ञा पाकर जब सोनी लोग तोडने को प्रस्तुत हुए तो सहसा भौंरो का घर गु जारव करने लगा। और उसी समय बीबी व्याकुल होकर दौडने लगी। मतवाली काली घटा आसमान मे देख कर खान भी चित्त मे व्याकुल हुआ।

धरणेन्द्र ने चेतावनी दी—अरे खान ! तुम पार्श्वनाथ के कोप-भाजन क्यो वनते हो ? मैं धरणेन्द्र, पार्श्वनाथ का प्रधान हूँ, ध्यान रख कर सोचो !

लश्कर मे मार पडने लगी, हाथी घोडो का सहार होने लगा, स्थान-स्थान पर मनुष्य मरने लगे। बीबी, बन्धु, बेटे नजर देखते अकेले जाने लगे, धीरज टूटने लगा। जहाँ जालोरी सकोसी था, वर्षा की बूँद भी न गिरी और तेज धूप तपने लगा। प्रजा पुकार करने लगी—खूनकार ! पार्श्वनाथ मूर्त्ति को छोडो, सब की सार करो ! खान (भीनमाल के हाकिम) ने कहा—मालिक ! इसे मत छोडो, इससे वहुत काम निकलेंगे, अधिक धन की माग करो !

धरणेन्द्र ने सोये हुए मल्लिक गजनीखान को नीचे गिरा दिया। वह मुख से पार्श्वनाथ ! पार्श्वनाथ ! कहने लगा। आवाज आई—मूर्त्ति को छोडो तो तुम्हे छोडूँगा ! उसे मार्मिक प्रहार से मारा, अग में अपार रोग उत्पन्न हो गया, अपार वेदना हुई। अन्न जल के प्रति अरुचि हो गई, निद्रा दूर चली गई। मरणान्त समय आया देख गजनीखान ने विचारा—पार्श्व जिनेश्वर मान चाहते हैं ! उसने कहा – प्रभु, मेरी वेदना रात्रि मे शान्त हो गई तो प्रात काल आपको अवश्य छोड दू गा ! खान के ऐसा कहते ही वेदना शात हो गई। खान ने पार्श्वनाथ को सिंहासन पर बैठा कर निरभिमान हो पूजा—सलाम करते हुए कहने लगा—

अल्लाह, अलख और आदम तुम्ही हो, तुम्हारे जैसा कोई नही ! पीर, पैगम्वर, खुदा और सुलतान तुम्ही हो ! बालक पर कृपा करो ! तुम्हारी आज्ञा कभी उल्लघन नही करू गा। पीर तो वहुत से हैं पर हे तेवीसवें राय (पार्श्वनाथ !) आप जैसा अन्य कोई नही !

इतनी स्तुति करने के पश्चात् सघ को बुलाकर उन्हे पार्श्वनाथ प्रतिमा सौप दी। जालोर नगर मे उत्सव हुआ। नित्य नये वाजिन्त्र वजने लगे। सधवा स्त्रियाँ भास गाने लगी। रग भर के खेलने लगे, याचको की आशा पूर्ण हुई।

भ० पार्श्वनाथ की प्रतिमा को रथारूढ करके आडवर पूर्वक जालोर से भिन्नमाल पहुचाया। सघवी वीरचद हर्षित हुआ और इस अवसर पर उसने महोत्सव किया, सतरह-भेदी पूजा रचाई। चारो दिशाओ के सघ को आमन्त्रित कर महोत्सव के पश्चात् सघ को पेहरावणी करके वहुमान दिया। शोक-सन्ताप दूर होकर मन के मनोरथ सिद्ध हुए।

सतरहवी शती की इस घटना को कवि पुण्यकमल ने वर्णित किया है। अन्य तीर्थमाला, चैत्य-परिपाटी आदि मे भी वर्णन पाया जाता है।

जालोर का मंत्री यशोवीर

तेरहवी शताब्दी मे जालोर मे यशोवीर नाम के तीन नामाङ्कित व्यक्ति हुए हैं। तीनो धनवान, धर्मिष्ठ और राज-समाज मे प्रतिष्ठित प्रभावशाली पुरुष थे। प्रथम यशोवीर श्रीमाल यशोदेव के पुत्र थे जिन्होंने महाराजा समरसिंह के समय स० १२३९ मे आदिनाथ जिनालय का रमणीय मण्डप बनवाया। दूसरे भा० पासु के पुत्र भा० यशोवीर थे जिन्होने स० १२४२ मे महाराजा समरसिंह के आदेश से 'कुमर विहार' का जीर्णोद्धार कराया था। तीसरे यशोवीर का यहाँ परिचय कराना अभीष्ट है।

जालोर के इतिहास मे मत्री यशोवीर का नाम स्वर्णाक्षरो मे लिखे जाने योग्य है। उस पर सरस्वती और लक्ष्मी की समान कृपा थी। राजनीति के क्षेत्र से भी वह धर्मनीति और दानवीरता मे किसी प्रकार न्यून नही था। इसके पिता धर्कट वशीय दुसाध उदयसिंह और माता का नाम उदयश्री था। जिनहर्ष कृत वस्तुपाल चरित्र में मत्री यशोवीर के सम्बन्ध में विस्तृत उल्लेख हैं। वह चौहान राजा समरसिंह व उदयसिंह का मत्री था। उसके निर्माण कराई हुई देवकुलिकाए आबू तीर्थ की विमलवसही और लूणिगवसही में है, जिनके लेख इस प्रकार हैं —

(१) सवत् १२४५ वर्षे वैशाख वदि ५ गुरौ श्री यशोदेवसूरि शिष्यैं श्री नेमिनाथ प्रतिमा श्री देवचद्रसूरिभि प्रतिष्ठिता। श्रीषडेरक गच्छे दुसा० श्री उदय सिंह पुत्रेण मत्री श्री यशोवीरेण मातृ दु० उदयश्री श्रेयोऽर्थं प्रतिमा सतोरणा सद्देवकुलिका कारिता श्रीमद्धर्कट वशे।

(२) दं० ॥ स० १२४५ वर्षे। श्रीषडेरक गच्छे महति यशोभद्रसूरि सन्ताने। श्री शातिसूरि रास्ते तत्पाद सरोज युग भृ ग ॥१॥ वितीर्णधन सचय क्षत विपक्ष लक्षाग्रणी कृतोरु गुरु रैवत प्रमुख तीर्थ यात्रोत्सव। दधत क्षिति भृता मुदे विशदधी सदु साधतामभूदुदय सज्ञया विविधवीर चूडामणि ॥२॥ तदगजन्मास्ति कवीन्द्र वन्धु मत्री यशोवीर इति प्रसिद्ध। ब्राह्मी रमाभ्या युगपद् गुणोस्य विरोध शान्त्यर्थं मिवाश्रितोय ॥३॥ तेन मुमतिना जिनमत

नैपुण्यात् कारिता स्व पुण्याय। श्री नेमिबिंवाधिष्ठित मध्या सद्देव-
कुलिकेय ॥४॥ शुभ भवतु ॥छ॥

ये दोनो लेख विमलवसही के है, प्रथम तो नेमिनाथ प्रतिमा की चरण चौकी पर व दूसरा स्तम्भ पर है। लूणगवसही मे दो देहरिया अपने पिता और माता की स्मृति मे बनाई थी जिसमे उपर्युक्त दूसरे लेख की ३ गाथाए अविकल है, केवल पहली गाथा मे 'तच्चरणाभोज" और 'तच्चरण सरोज' का अन्तर है। अत यहाँ सुमतिनाथ और पद्मप्रभ भगवान की देवकुलिकाओ के चतुर्थ श्लोक ही यहा दिये जा रहे हैं।

(३) तेन लुमतिना जिनमत निपुणेन श्रेयसे पितुरकारि।
श्रीसुमतिनाथ बिबेन सयुता देवकुलिकेय ॥४॥छ॥६० ॥छ॥

(४) तेन सुमतिना मातुः श्रेयार्थ कारिता कृतज्ञेन।
श्रीपद्मप्रभबिबालकृत सद्देवकुलिकेय ॥४॥छ॥६०३॥छ॥

ये चारो लेख "श्री अर्बुद-प्राचीन-जैन-लेख सदोह" के लेखाङ्क १५०-५१ एव ३५९-३६१ मे प्रकाशित हैं। लेखाङ्क ३६० और ३६२ मे सुमतिनाथ व पद्मप्रभ की पच कल्याणक तिथियाँ है जिन्हे यहाँ नही लिखा गया है।

श्री जयन्तविजयजी महाराज ने जैन सत्यप्रकाश वर्ष २ अक १० मे तीन अभिलेख प्रकाशित किये है जो गुडा-बालोतान के है। मादडी गाँव मे यशोवीर का ननिहाल था। वहा इस समय जैनो की बस्ती नही है, साठ वर्ष पूर्व मादडी गाँव की सीमा मे निकली हुई पाच प्रतिमाओ को यति राजविजयजी ने ला कर अपनी बगीची मे घर देरासर बना कर विराजमान कर दी थी। उस मादडी गाँव मे और भी अनेक प्रतिमाए छिपी पडी हैं किन्तु उस समय गाँव का जागीर-दार पावठा का ठाकुर अनुकूल न होने से प्राप्त करना तो दूर पर जैन सघ देख तक न सका था।

इन तीन लेखो मे दो लेख मत्री यशोवीर के हैं, जो इस प्रकार हैं —

१ सवत् १२८८ वर्षे ज्येष्ठ सुदि १३ बुधे श्री ख (ष)डेरक गच्छे श्री यशोभद्र सूरि सताने दुसाध श्री उदयसिह पुत्रेण मत्री श्री यशोवीरेण स्वमातु श्री उदयश्रिय. श्रेयसे मादडी ग्राम चैत्ये जिन युगल कारित प्रतिष्ठित च श्री शातसूरिभि।

अर्थात्—स० १२८८ जेठ सुदि १३ बुधवार को श्री खडेरक गच्छीय श्री यशोभद्रसूरिजी की परम्परा की आम्नाय वाले दु साध विरुदधारक श्री उदय

सिंह के पुत्र मत्री श्री यशोवीर ने अपनी माता श्री उदयश्री के श्रेय के हेतु मादडी गांव के जिनालय मे जिन युगल (कायोत्सर्ग प्रतिमाए) कराये और उसकी प्रतिष्ठा श्री शातिसूरिजी ने की ।

दूसरी प्रतिमा पर भी इसी सवत्—मिती का यही लेख है जो मूलनायकजी के दाहिनी ओर है, मुनि जयन्तविजयजी ने उसका लेख अलग से नही दिया है ।

२ ॐ श्री ख(ष)डेरक गच्छ सूरि चरणोपास्ति प्रवीणान्वये ।
दु साधोदर्यसिह सूनु रखिल क्ष्माचक्र जाग्रद्यशा ।
बिब शांति विभोश्चकार स यशोवीरो गुरु मन्त्रिणा ।
मातु श्रीउदयश्रिय शिवकृते चैत्ये स्वय कारिते ॥१॥

ज्येष्ट(ष्ठ) शुक्ल त्रयोदश्यां वसुवस्वर्क वत्सरे ।
प्रतिष्टा(ष्ठा) मादडी ग्रामे चक्रे श्री शातिसूरिभि ॥

अर्थात्—सडेरक गच्छ के आचार्यो के चरणोपासना मे प्रवीण वशोत्पन्न दुसाध उदर्यसिह के पुत्र, समस्त राजाओ मे फैली हुई कीर्त्ति वाले यशस्वी महामत्री यशोवीर ने अपनी मातुश्री उदयश्री के आत्म श्रेयार्थ श्री शातिनाथ स्वामी की प्रतिमा मादडी मे अपने वनवाये हुए चैत्यालय मे स० १२८८ ज्येष्ठ सुदि १३ बुधवार को श्री शातिसूरिजी द्वारा प्रतिष्ठा कराई ।

स० १२९३ मे आबू की लूणिगवसही की प्रतिष्ठा मे ८४ राणा, १२ मण्डलिक, ४ महाधर और चौरासी जातियो की विशद सभा मे सोभन सूत्रधार द्वारा निर्मित 'लूणिग वसति' के शिल्प कला समृद्ध अद्भुत चैत्य की भूलो के सम्वन्ध मे पूछने पर विद्वान मत्री यशोवीर ने १४ भूलें वतलाई थी, जिसका उपदेशसार टीका मे भी उल्लेख है । मत्रीश्वर ने वस्तुपाल यशोवीर मत्री के शिल्प शास्त्रादि सभी विद्या कौशल आदि सद्गुणो की भूरि-भूरि प्रशसा की थी ।

प्रवन्ध-चिन्तामणि (चतुर्थ प्रकाश) मे मत्री यशोवीर के सम्वन्ध मे इस प्रकार लिखा है कि—

जावालिपुर निवासी मत्री यशोवीर शिल्प शास्त्रादि का वडा अनुभवी विद्वान था । आवू पर तेजपाल मत्री द्वारा अपने भ्राता की स्मृति मे विशाल, 'लूणिगवसही' का निर्माण होकर प्रतिष्ठा के वाद मत्री यशोवीर को वुलाकर प्रासाद के गुण-दोष का अभिप्राय पूछा । उसने स्थपति शोभनदेव को वुला कर कहा—रगमण्डप मे शाल-भजिका (पुत्तली) की जोडी की विलास घटना,

तीर्थङ्कर प्रासाद मे सर्वथा अनुचित और वास्तु शास्त्र से निषिद्ध है। इसी तरह भीतरी गृह के प्रवेश द्वार पर सिंहो का यह तोरण देवता की विशेष पूजा का विनाश करने वाले है। तथा पूर्वज पुरुषो की मूर्त्तियो से युक्त हाथियो के सन्मुख प्रासाद का होना बनाने वाले के भविष्य के विनाश का सूचक होता है। इस विज्ञ कारीगर के हाथ से भी जो इस प्रकार के अप्रतिकार्य ये तीन दोष हो गए, ये भावी कर्म का दोष है। ऐसा निर्णय करके वह जैसे आया था, वैसे ही चला गया। उसकी स्तुति के ये श्लोक हैं—

२२० हे यशोवीर, यह जो चन्द्रमा है वह तुम्हारे यश की रक्षा के लिए (किसी की नजर न लग जाय इस लिए) किया गया रक्षा (राख) का 'श्री' कार है।

२२१ हे यशोवीर, शून्य जिसके मध्य मे है ऐसे ये विन्दु यो तो निरर्थक ही हैं पर तुम रूप एक (अक) के साथ हो जाने से ये सख्यावान वन जाते हैं।

२२२ हे यशोवीर, जब विधाता ने चन्द्रमा मे तुम्हारा नाम लिखना प्रारभ किया तो उसके पहले के दो अक्षर (यश) ही भुवन मे न समा सके।

[१६३] यशोवीर के निकट न कोई [कवि] माघ की प्रशसा करता है न कोई अभिनद का अभिनदन करता है, और कालिदास भी उसके पास कलाहीन (निस्तेज) मालूम देता है।

[१६४] यशोवीर मत्री ने सज्जनो के साक्षात् (सन्मुख), मुख मे रही दाँतो की ज्योति के बहाने ब्राह्मी (सरस्वती) को और हाथ मे रही हुई सोने की मुद्रा के बहाने श्री (लक्ष्मी) को प्रकाशित किया।

[१६५] इस चौहान नरेन्द्र के मत्री ने वैसे गुण अर्जन किए जिनसे ब्रह्मा और समुद्र की पुत्रियो (सरस्वती और लक्ष्मी) को भी नियन्त्रित कर दिया।

[१६६] जहाँ लक्ष्मी है वहाँ सरस्वती नही है, जहाँ ये दोनो हैं वहाँ विनय नही है। पर हे यशोवीर, यह बडा आश्चर्य है कि तुम मे ये तीनो विद्यमान हैं।

[१६७] वस्तुपाल और यशोवीर ये दोनो सचमुच ही वाग्देवता (सरस्वती) के पुत्र हैं, नही तो फिर इन दोनो का दान करने मे एक ही जैसा स्वभाव कैसे होता ?

चन्द्रगच्छीय खरतर सा० सलखण

आवू तीर्थ की विमलवसही के स्तभादि पर उत्कीर्णित लेख से विदित होता है कि स० १३०७ मे जावालिपुर के खरतरगच्छीय श्रावक सलखण ने भगवान आदिनाथ के सर्वांगाभरणो का जीर्णोद्धार कराया था, जिसका लेख इस प्रकार है —

सवत् १३०८ वर्षे फाल्गुण वदि ११ शुक्रे श्री जावालिपुर वास्तव्य चन्द्र-गच्छीय खरतर सा० दुलह सुत सधीरण तत्सुत सा० वीजा तत्पुत्र सा० सलखणेन पितामही राजू माता साउ भार्या माल्हणदेवि (वी) सहितेन श्री आदिनाथ सत्क सर्वांगाभरणस्य साऊ श्रेयोर्थं जीर्णोद्धार कृत ।।

अर्थात्—स० १३०८ मिती फाल्गुन वदि ११ को जावालिपुर निवासी खरतर गच्छीय सा० दुलह पुत्र सधीरणतत्पुत्र वीजा के पुत्र सा० सलखण को अपनी पितामही राजू, माता साऊ और भार्या माल्हणदेवी आदि के साथ माता साउ के श्रेय-कल्याण निमित्त श्री आदिनाथ भगवान के सर्वांगाभरणो का जीर्णोद्धार कराया ।

नागौर के वरहुडिया साहु नेमड का परिवार

स० १२९६ मिती वैशाख सुदि ३ की आवू की लूणिगवसही की प्रशस्ति जो प्राचीन जैन-लेख-सग्रह के लेखाङ्क ६६ मे प्रकाशित है, उसमे नागौर के वरहुडिया साहु नेमड सुत सा० राहड सा० जयदेव, सहदेव पुत्र सा० खेटा, गोमल, जयदेव के पुत्र सा० वीरदेव, देवकुमार, हालू एव राहड के पुत्र सा० जिणचन्द्र, धनेश्वर, अभयकुमार लघु भ्रातृ लाहड ने अनेक स्थलो-तीर्थो-मन्दिरो मे जो निर्माण कराये, उनका उल्लेख है यह अभिलेख ४५ पक्ति मे है । पक्ति ३२-१३ दोवार लिखा प्रतीत होता है । इसमे जालोर के पार्श्वनाथ चैत्य की जगती मे श्री आदिनाथ विम्व और देवकुलिका निर्माण कराने का उल्लेख १३-१४वी पक्ति में है तथा ३३-३४वी पक्ति मे फिर पार्श्वनाथ चैत्य की जगती मे अष्टापद (देहरी) मे खत्तक द्वय निर्माण कराने का उल्लेख इस प्रकार है —

"श्री जावालिपुरे श्री पार्श्वनाथ चैत्य जगत्यां श्री आदिनाथ विव देवकुलिका च"
"श्री जावालिपुरे श्री सौवर्णगिरौ श्री पार्श्वनाथ जगत्यां अष्टापद मध्ये खत्तक द्वय च"

जालोर में रचित साहित्य

जैन धर्म मे ज्ञान-दर्शन-चारित्र त्रिरत्न को मोक्ष का मार्ग बतलाया है। स्वणगिरि-जालोर तीर्थ इनकी सम्यक् आराधना मे गत दो सहस्राब्दी से अग्रणी रहा है। विश्व साहित्य मे आदरणीय स्थान पाने वाले महान ग्रन्थो का यहाँ निर्माण हुआ, दर्शन के आधारभूत महान् जिनालयो के निर्माण कार्य विक्रम की दूमरी शती से अब तक अनवरत होता रहा। भारत पर यवन राज्य ग्रहण से ग्रसित हो अनेक पावन जिनालय भूमिसात् कर दिए गए पर समय-समय पर जीर्णोद्धार-नव निर्माण द्वारा आज भी भव-समुद्र से तिराने वाले तीर्थ के रूप मे आज भी यह पवित्र तीर्थ गौरवान्वित है। यहाँ महान् जैनाचार्यो ने विचरण कर अपने चरण रज से पवित्र किया, अनेक नव्य जैनो को प्रतिबोध दिया और अपने सारभूत उपदेशो को अक्षर देह-ग्रन्थ रूप मे निर्माण कर भावी पीढी के लिए प्रकाशस्तभ स्थापित किये। राजस्थान मे चित्तौड और भिन्नमाल की भाँति जालोर-स्वर्णगिरि भी श्रुत-ज्ञान की सेवा में अग्रणी रहा है। यहाँ उन महान् ग्रन्थो का सक्षेप में परिचय दिया जा रहा है।

(१) कुवलयमाला

विश्व साहित्य के महत्वपूर्ण ग्रन्थो में अपना स्थान प्राप्त करने वाले कुवलय-माला ग्रन्थ की रचना भी जावालिपुर-जालोर मे हुई। वि० स० ८३४ (शक स० ६९९) के अन्तिम दिन में उद्योतनसूरि नामक जैनाचार्य ने अपना नाम दाक्षिण्याकसूरि रख कर इसकी रचना की है। यह ग्रन्थ प्राकृत साहित्य का एक अमूल्यरत्न है इसकी रचना बाण की कादम्बरी और त्रिविक्रम की दमयन्ती कथा की भाँति चम्पू शैली में है। इस मनोरम कृति में प्राकृत भाषा के अतिरिक्त अपभ्रंश और पैशाची भाषा में भी किए हुए वर्णन भाषाशास्त्र की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी है। अपभ्रंश भाषा के उदाहरण सर्वप्राचीन है और अठारह देशो में प्रयुक्त होने वाली भाषा का आभास मिलता है। कवि ने अपने से पूर्ववर्त्ती पादलिप्त, सातवाहन, षटपर्णक, गुणाढ्य व्यास, वाल्मीकि, बाण, विमलाङ्क, दि० रविषेण, देवगुप्त, प्रभजन और भव-विरह (हरिभद्र) आदि कवियो को भी स्मरण किया है।

कवि ने अपना विशेष परिचय देते हुए ग्रन्थ के अन्त मे लिखा है कि 'ह्री' देवी के दर्शन के प्रताप से यह कथा लिखी है। अपने को सिद्धान्त सिखाने वाले गुरु वीरभद्र और युक्ति सिखाने वाले गुरु को माना है। अपने सासारिक अवस्था के पूर्वज आदि का परिचय देते हुए लिखा है कि त्रिकर्माभिरत, महादुकर मे प्रसिद्ध उद्योतन नामक क्षत्रिय हुआ जो वहा का तत्कालीन भूमिपति था। उसका पुत्र सप्रति या वडेसर कहलाता था। उसके पुत्र उद्योतन ने जावालिपुर नगर मे वीरभद्र कारित श्री ऋषभदेव जिनालय मे चैत्र कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी के दिन भव्यजन को वोध देनेवाली इस कथा का निर्माण किया। उस समय वहा श्री वत्सराज नामक राजा राज्य करता था। कवि ने अपना चन्द्रकुल लिखा है। काव्य बुद्धि या कवित्वाभिमान से नही पर धर्म कथा कहने के आशय से इस ग्रन्थ की रचना की है। कवि के दीक्षा गुरु तत्त्वाचार्य थे।

प्रतिहार वशी राजा वत्सराज जावालिपुर मे राज्य करते हुए भी गौड, वगाल, मालव प्रदेशो मे दिग्विजय करके उत्तरापथ मे महान् राज्य स्थापित करने मे उद्यमशील था।

२ **चैत्यवन्दनक**—जैन धर्म मे फैले हुए चैत्यवास शिथिलाचार को दूर कर विधिमार्ग प्रकाशक, दुर्लभराज की सभा, पाटन मे खरतर विरूद प्राप्त करने वाले जैनाचार्य जिनेश्वरसूरि ने स० १०८० का चातुर्मास जावालिपुर-जालोर मे करके प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना की।

३ **अष्टक प्रकरण वृत्ति**—यह रचना भी स० १०८० मे श्री जिनेश्वरसूरिजी ने की।

४ **पच ग्रन्थी व्याकरण**—उपर्युक्त श्री जिनेश्वरसूरिजी के गुरु भ्राता श्री बुद्धिसागरसूरिजी ने इसी स० १०८० के चातुर्मास मे ७००० श्लोक परिमित इस महान् व्याकरण ग्रन्थ की रचना की है। इसकी प्रशस्ति के ११वें श्लोक मे रचना समय और स्थान का निर्देश इस प्रकार है —

श्रीविक्रमादित्य नरेन्द्र कालात् साशीतिके याति समा सहस्रे।
सश्रीक जावालिपुरे तदाद्य दृब्ध मया सप्त सहस्र कल्पम् ॥११॥

५ **विवेक विलास**—यह ग्रन्थ अनेक व्यवहारिक विषयो से सपृक्त है जिसकी रचना वायडगच्छीय श्री जिनदत्तसूरिजी ने जावालिपुर नरेश चाहमान उदयसिह के मत्री देवपाल के पुत्र धनपाल के लिए की है जिसकी प्रशस्ति यहा उद्धृत की जाती है।

विवेक विलास प्रशस्ति :

अस्ति प्रीतिपदं गच्छो जगतः सहकारवत् ।
जन पुस्कोकिलाकीर्णां वायड़ स्थानक स्थितिः ॥१॥

आम्रवृक्ष के तुल्य जगत् को प्रीति उपजाने वाले और श्रेष्ठ पुरुष रूपी कोकिलो से व्याप्त ऐसा वायड नामक गच्छ है ।

अर्हन् मत पुरी वप्र-स्तत्र श्री राशिल प्रभुः ।
अनुल्लघ्यः परैर्वादि-वीरैः स्थैर्य गुणैक भूः ॥२॥

उस गच्छ मे, जनमत रूपी नगरी के रक्षक किले, के सदृश, वादि रूपी शूरवीरो से अजेय और स्थिरता आदि सद्गुणो के निवास स्थान ऐसे राशिल (सूरि) प्रभु हुए ॥

गुणा श्रीजीवदेवस्य, प्रभो रद्भुत केलय ।
विद्वज्जन शिरोदोलां यन्नोज्झन्ति कदाचन ॥३॥

श्री जीवदेव गुरु महाराज के गुणो की लीला कुछ अद्भुत है । क्यो वे (गुण) विद्वज्जनो के मस्तक रूपी भूले को किसी समय नही छोडते । अर्थात् विद्वान लोग हमेशा शिरधुन कर श्रीजीवदेव महाराज के गुणो की प्रशसा करते हैं ।

अस्ति तच्चरणोपास्ति - सजात स्वस्ति विस्तरः ।
सूरि श्री जिनदत्ताख्य ख्यात. सूरिषु भूरिषु ॥४॥

उन जीवदेव महाराज के चरण सेवा से कल्याण-परम्परा प्राप्त श्रीजिनदत्त-सूरि नामक आचार्य सब आचार्यो मे प्रसिद्ध हैं ।

चाहुमानान्वय पाथोधि - सवर्धनविधौ विधु ।
श्रीमानुदयसिंहोऽस्ति, श्रीजावालिपुराधिपः ॥५॥

चाहुमान (चौहान) वश रूप समुद्र को उल्लास देने को चन्द्रमा सदृश श्रीउदयसिंह जावालिपुर का राजा ।

तस्य विश्वास सदनं, कोश रक्षा विचक्षण ।
देवपालो माहामात्य, प्रज्ञानन्दन चन्दनः ॥६॥

उस उदयसिंह राजा का विश्वास स्थान, कोश-भण्डार की रक्षा मे निपुण देवपाल नामक महामंत्री बुद्धिरूपी नन्दन वन मे चन्दन जैसा यानी बडा बुद्धिशाली है।

आधार सर्वधर्माणा - मवधिर्ज्ञान शालिनाम्।
आस्थान सर्वपुण्याना - माकर सर्वसम्पदाम् ॥७॥

प्रतिपन्नात्मजस्तस्य, वायडान्वय सम्भव।
धनपाल शुचिर्धीमान् विवेकोल्लासि मानस ॥८॥

सर्व धर्मों का आधार ज्ञानशाली लोगो मे अग्रसर, सब पुण्यो का वसतिस्थान सब सम्पदाओ की खान पवित्र, बुद्धिशाली, विवेक विकसित मनवाला वायड वशोत्पन्न धनपाल नामक देवपाल का पुत्र है।

तन्मन स्तोष पोषाय, जिनाद्यं दत्तसूरिभि।
श्री विवेकविलासाख्यो, ग्रन्थोऽय निर्ममेऽनघ ॥९॥

श्री जिनदत्तसूरिजी ने उस धनपाल के मन को सन्तुष्ठ करने के लिए यह विवेकविलास नामक पवित्र ग्रन्थ रचा है।

देव श्री धरणो भुजगम गुरुर्याबद्युगादि प्रभो,
श्री मद्विश्व विद प्रविस्फुर कलालकार शृङ्गारिण।

भक्ति व्यक्ति विशेषमेष कुरुते तावच्चिर नन्दतात्,
ग्रन्थोऽय भृशमश्लथादरपरैः पापठ्यमानो बुधं ॥१०॥

नागकुमार का स्वामी श्री धरणेन्द्रदेव, स्फुरण पाती हुई सब कलाओ को शोभा देने वाली और सर्वज्ञ श्री युगादि नाथ ऋषभ भगवान की अतिशय भक्ति जहा तक प्रगट करता है वहा तक पडित पुरुषो के द्वारा आदर से और वार-वार पढा जाने वाला यह विवेकविलास ग्रन्थ चिरकाल तक आबाद रहे।

६ जीवदया रास—कवि आसिगु जालोर निवासी था। उसने स० १२५७ मे इस रास की रचना की है।

आदि—उरि सरसति आसिगु भणइ, नवउ रासु जीवदया सारु।
कन्नु धरिवि निसणेहु जण, दुत्तरु जेम तरहु ससारु ॥१॥

× × ×

जालउरउ कवि वज्जरइ, देहा सरवरि हंसु वखाणउ ॥२॥

× × ×

वदहु सामिउ पास-जिणु, जालउरागिरि कुमर विहारि ॥४९॥

अति—वाला-मन्त्रि तणइ पाछोपइ, वेहल महिनदन महिरोपइ ?
तसु सक्खह कुलचद फलु, तसु कुलि आसाइत अच्छतु ।
तसु वलहिय पल्ली पवर, कवि आसिगु वहुगुण सजुत्त ॥५१॥

सातउ परिया कवि जालउरउ, माउसालि सुम्मइ सीयलरउ ।
आसी दव दोही वयण, कवि आसिगु जालउरह आयउ
सहजिगपुर पासह भवणि, नवउ रासु इहु तिणि निप्पाइउ ॥५ ॥

सवत बारह सय सत्तावन्नइ (१२५७), विक्कम कालि गयइ पडिपुन्नइ ।
आसोयहँ सिय-सत्तमिहि हत्थो हत्थि जिण निप्पायउ ।
सतिसूरि-पय-भत्तयरि, रयउ रासु भवियहँ मण मोहणु ॥५३॥

७ चदनबाला रासु—यह रास भी उपर्युक्त कवि आसिगु की रचना है ।

अत—एहु रासु पुण वृद्धिहि जती, भाविहि भगतिहि जिणहरि दिती ।
पढइँ पढावइ जे सुणइ, तह सवि दुक्खइँ खइयह जती ॥
जालउर-नयरि आसिगु भणइ, जम्मि जम्मि तूसउ सरसत्ती ॥३५॥

८ प्रबुद्ध रोहिणेय नाटक—स० १२६८ वादिदेवसूरि प्रशिष्य रामभद्र

९ शांतिदेव रासु—यह रचना स० १३१३ मे लक्ष्मीतिलकोपाध्याय ने की । जालोर के राजा उदयसिंह के राज्य मे स्वर्णगिरि पर फाल्गुन सुदि ४ को श्री जिनेश्वरसूरि द्वारा महोत्सव पूर्वक स्थापना करने का उल्लेख निम्नोक्त गाथाओ मे है—

जालउर उदयसिह-रज्जि सोवनगिरी
उवरि सो सति ठाविउ जिणेसरसूरी
पवर-पासाय - मज्झमि सवच्छरे
फग्गुण-सिय-चउत्थि तेरहइ तेरुत्तरे ॥४८॥

जेम इदिहि जेम इदिहि लच्छि-विच्छड्डि,
नेऊण सोवन्नगिरि सतिनाहु जम्मक्खणि न्हाविउ ।
तिम गुरुयाडबरिण सिरि-सुवन्नगिरि-उवरि ठाविउ ॥
जयतसिह-इद-प्पमुह, इदहि न्हाविज्जतु ।
सयल सघ-दुरियइ हरउ, सतिनाहु अइकतु ॥४९॥

१० **श्रावक धर्म विधि वृहद् वृत्ति**—इसे १५१३१ श्लोको मे श्रीलक्ष्मीतिलको-पाध्याय ने स० १३१७ माघ सुदि १४ के दिन जालोर मे रचा। यह मूल प्रकरण श्री जिनेश्वरसूरि कृत है। प्रशस्ति गत निम्नोक्त २ श्लोक उद्धृत किये जाते हैं—

"श्रीवीजापुर-वासुपूज्य भवने हेम सदण्डो घटो,
यत्रारोप्य थ वीर चैत्य मसिघत् श्री भीमपल्या पुरि।
तस्मिन् वैक्रम वत्सरे मुनि शशि त्रेतेन्दु माने (१३१७) चतु-
दश्यांमाघ सुधीह चाचिगनृपे जावालिपुर्यां विभौ ॥
वीरार्हद्-विधि चैत्य मण्डन जिनाधीशा चतुर्विशति-
सौधेषु ध्वजदण्ड-कुम्भ पटलीं हैमीं महिष्ठंमहे ।
श्रीमत्सूरि जिनेश्वरा युगवरा प्रत्यष्ठु रस्मिन् क्षणे,
टीकाऽलङ्कृति रेषिकाऽपि समगात् पूर्त्ति प्रतिष्ठोत्सवम् ॥

अर्थात्—जिस वर्ष वीजापुर के वासुपूज्य जिनालय पर सुवर्णदण्ड एव स्वर्ण कलश चढाये गए और जिस वर्ष मे भीमपल्लीपुर में वीर प्रभु का चैत्य सिद्ध हुआ, उस विक्रम सवत् १३१७ मे माघसुदि १४ के दिन यहाँ जावालिपुर-जालोर मे चाचिग राजा के राज्यकाल मे वीर जिनेश्वर के विधि-चैत्य के मण्डन रूप चौवीस जिनेश्वरो के मन्दिरो पर बडे महोत्सव पूर्वक युगप्रधान श्री जिनेश्वरसूरि ने ध्वजा दण्ड के साथ स्वर्ण-कलशो की प्रतिष्ठा की। उसी क्षण यह टीका रूपी अलकार भी परिपूर्ण प्रतिष्ठित हुआ।

११ **श्रावकदिनचर्या**—सवेगरगशाला नामक १८००० श्लोक परिमित महान् ग्रन्थ के रचयिता श्री जिनचद्रसूरिजी जव जावालिपुर पधारे तो उन्होने "चीवदणमावस्सय" आदि गाथाओ का व्याख्यान श्रावक सघ के समक्ष किया। इसमे जो सैद्धान्तिक सवाद आये वे सूरिजी के शिष्य ने लिख लिए जिससे ३०० श्लोक परिमित 'दिनचर्या' ग्रन्थ तैयार हो गया जो श्रावको के लिए वडा उपकारी है।

१२ **निर्वाणलीलावती कथा सार**—श्री जिनेश्वरसूरिजी द्वारा स० १०९२ मे रचित निर्वाणलीलावती कथा के सार रूप श्री जिनरत्नसूरि ने स० १३४१ मे जावालिपुर मे इस ग्रन्थ की रचना की जिनकी २६७ पत्र वी कागज पर लिखी प्रति (क्रमाङ्क ३५१) मे जेसलमेर भडार मे है जिनमे निम्न उलेख है—

मार्गा दि शि पुष्य योगे जावालिपतन वरेऽथ समर्थितोऽयम् ।
प्रत्यक्षर गणनया पञ्चाशताद्धं सार्द्धत्रिशत्यधिक युक्त मनुष्टुभामोः ॥१८॥

१३. **महावीर कलश गा०-२९**—इस अज्ञात कर्त्तृक रचना का उल्लेख जैन मरु-गूर्जर कवि और उनकी रचनाए पृ० ४५ मे है ।

१४. **जालोर नवफणा पार्श्व १० भव स्तवन**—यह गा० ३५ की रचना स० १५४३ मे पद्ममन्दिर की है जिसकी प्रति स० १५४६ लिखित जैसलमेर भण्डार के गुटके मे है ।

१५. **सुमित्रकुमार रास**—पिप्पलक विवेकसिंह शि० धर्मसमुद्र का यह रास स० १५६७ मे रचित उपलब्ध है ।

१६. **शील रास**—स० १६१२ से पूर्व श्री विजयदेवसूरि द्वारा भ० नेमिनाथ के सम्बन्ध मे यह जालोर मे रचित है ।

१७ **विल्हण पचाशिका चौपाई**—स० १६३९ आ० सु० १ को मडाहड गच्छीय सारग कवि की रचना गा० ४१२ की है ।

१८ **मातृका बावनी**—स० १६४० पौष बदि १० गुरुवार, मडाहड गच्छीय कवि सारग ।

१९ **भोज प्रबन्ध चौपाई**—स० १६५१ श्रावण बदि ९ जालोर, मडाहड गच्छीय कवि सारग ।

२०. **वीरांगद चौपाई**—स० १६४५ ज्येष्ठ सुदि ५ जालोर मडाहड गच्छीय कवि सारग ।

२१. **भावषट्त्रिंशिका सटीक**—स० १६७५ आषाढ़ सुदि ५ जालोर मडाहड गच्छीय कवि सारग ।

२२. **जालोर चैत्य परिपाटी**—स० १६५१ मे नगर्षि कृत है ।

२३ **वरकाणा पार्श्वनाथ स्तोत्र**—*स० १६५१ जालोर नगर्षि गा-७१ ।

२४ **पार्श्वनाथ स्तवन**—(सस्कृत) गा० १३ सतरहवी शती के कवि ज्ञान-प्रमोद ।

२५ सूक्ति द्वात्रिंशिका विवरण—तपा गच्छीय कवि राजकुशल द्वारा स० १६५० मे गजनीखान के राज्य में।

२६ मदनकुमार चरित्र रास—दयासागर (पिप्पलक उदयसमुद्र शि०) स० १६६९ लघु गुरु-बघु देवनिधान के आग्रह से।

२७ शत्रुञ्जय यात्रा रास—स० १६७९ हेमधर्म शि० विनयमेरु।

२८ वृत्त रत्नाकर वृत्ति—समयसुन्दरोपाध्याय स० १६९४ जालोर—लूणिया फसला के स्थान मे।

२९ क्षुल्लककुमार चौपाई—समयसुन्दरोपाध्याय स० १६९४ जालोर—लूणिया फसला के स्थान मे।

३० चम्पक सेठ चौपाई—समयसुन्दरोपाध्याय स० १६२५ जालोर

३१ सप्त स्मरण वृत्ति—समयसुन्दरोपाध्याय स० १६९५ लूणिया फसला प्रदत्त वसति मे शि० हर्षनदन स०।

३२ कथा कोश—समयसुन्दरोपाध्याय स० १६९५ चैत सुदि ५ लि० ग्र ६०००

३३ परिहां (अक्षर) बत्तीसी—धर्मवर्द्धन स० १७३५ जालोर।

३४ रोहिणी चोपाई—कर्मसिह (पायचद गच्छ) स० १७३७ का० सु० १० रवि जालोर।

३५ जालोर मडन षट् जिणहर स्तवन—गा० १७ मतिकुशल स० १७२७।

३६ रसिक प्रिया टीका—समयमाणिक्य (समरथ) स १७५५।

३७. प्रदेशी सवध—तिलकचद (जयरग शिष्य) स० १७४१ जालोर।

३८ समयसार बालावबोध—*रामविजय (ख० दयासिह शि०) स० १७९२ स्वर्णगिरि।

३९. साधु वन्दना—जयमल स० १८०७ जालोर।

४० अजितनाथ स्तवन—जयमल स० १८०७ जालोर।

*पृथ्वी पति विक्रम के राज मरजाद लीन्है, सत्रहसैबीते पर बानुआ वरस मे।
आसू मास आदि द्यौस सपूरन ग्र थ कीन्हो, वारतिक करिकै उदार वार समि मे ।।

जो पै यहु भाषा ग्र थ सवद सुवोध याको, तोहू विनु मप्रदाय नावै तत्व वस मे।
याते ज्ञान लाभ जानि सतनि कोवैन मानि वात रुपग्र थ लिख्यो महा शान्त रस में ।।

खरतर गच्छ नाथ विद्यमान भट्टारक जिनभक्तिसूरिजू के धर्म राज धुर में।
खेम साख माझि जिनहर्षजू वैरागी कवि शिष्य सुखवद्धन सिरोमनि सुघर मे ।।

ताके शिष्य दयासिघ गणि गुणवत मेरे धरम आचारिज विख्यात श्रुतधर में।
ताको परसाद पाइ रूपचद आनद सो पुस्तक वनायो यह मोनगिरि पुर में ।।

मोदी थापि महाराज जाको सनमान दीन्हो फतैचद पृथीराम पुत्र नथमाल के।
फतैचद जू के पुत्र जसरूप जगन्नाथ गोत गुनधर मे धरैया शुभ चाल के ।।

तामें जगन्नाथ जू के वूझिवै के हेतु हम व्यौरि के सुगम कीन्है वचन दयाल के।
वाचत पढत अब आनद सदा ए करो सगि ताराचद अरु रूपचद वाल के ।।

देशी भाषा को कहू, अर्थ विपर्यय कीन।
ताको भिच्छा दुक्कड सिद्ध साख हम कीन ।।

*अत—चद्र अनइ रस जाणीइ तु भमरुली बाण वली ससी जोइ तु सा नवरगी,
ते सवच्छर नाम कहुतु भमरुली सावण सुदि तिय होइ सा नवरगी ६९
श्री जालुर नयर भलु तु भमरुली, जिणहर पच विसाल सा नवरगी,
हरखि तिहा मइ तवन करु तु भमरुली, भणता मगलमाल सा नवरगी ७०

कान्हड़दे प्रबन्ध में जालोर वर्णन

कवि पद्मनाभ का कान्हडदे प्रबन्ध राजस्थानी का एक सर्वोत्तम महाकाव्य है जिसमे अल्लाउद्दीन खिलजी के साथ कान्हडदे-वीरमदे के युद्धो का प्रामाणिक इतिवृत्त है। इसमें जालोर नगर का बडा ही सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है, यहा उसका कुछ अश उद्धृत किया जाता है —

श्रीनगर जालहुर तणी रचना। गढ मढ मन्दिर पोलिपगार। अट्टालीय। मालीया टोडडे त्रिकलस गगन चुम्बित कोसीसा। सातखणा धवलगृह। रम्य प्रवेश।

सूकडिया गवाक्ष। मलयागिरी जाली। कृष्णागिरि थाभली। मणिवद्ध काचवद्ध भूमि। उराउरी वलभी। पगथीयारी चउकीसर चूनालूआ। शतभूमिका सहस्रभूमिका सभा नी रचना।

महाराजाधिराज श्री कान्हडदे सभा पूरी वइठउ छइ। सिहासनि पाउ परठिउ छइ। मेघवना उलच वाध्या छइ। परीयछ ढली छइ। केतकी ना गध गहगहीया छइ। सोरभना सोड साचग्यिा छइ। सभा माहि सेरी मेल्हाणी छइ। जाइ वेली वालउ पाडल ना परिमल पचवर्ण पुष्फजाति ना प्रकर पाथरिया छइ। गुल्लाल ना गध गह गहीया छइ। पडीया कपूर पाए चपाइ छइ। घोडा वही-आलइ घालोया छइ। हाथीयानी सारसी आगलि कानि पडिउ काइ नथी सभलातु। पच शब्द वाजित्र वाजइ छइ। गल्या पीतल रताजणी तणा पपावज धोंकार करइ छइ। नृत्यकी पात्र नृत्य करइ छइ। तत वितत घन शुखिर पचवर्ण वाजित्र वाजइ छइ। पच वर्ण छत्र धरिया छइ। चामर व्यिजन विहू पपि हुइ छइ। अमात्य प्रधान सामत मडलीक मुकुट वर्द्धन श्रीगरणा वइगरणा धर्मादि करणा मसाहणी टावरो वारहीया पुरुप वइठा छइ।

॥ चउपई ॥

कोठा नइ कोसीसा घणा, गुप वार मढ मतवारणा।
वली धवलहर जोया चडी, रतन जडित वइठो फूदडी ॥२४२॥

राजलोक जोया कुयरी, जिहा कान्हडनी अतेउरी।
कूयरि करइ केतलउ वपाण, जोया पच वर्ण केकाण ॥२४३॥

॥ दूहा ॥

कणयाचल जणि जाणीइ, ठाम तणउ जावालि ।
तही लगइ जगि जालहुर, जण जपइ इणि कालि ॥५॥

विषम दुर्ग सुणीइ घणा, इसिउ नही आसेर ।
जिसउ जालहुर जाणीइ, तिसउ नही ग्वालेर ॥६॥

चित्रकूट तिसउ नही, तिसु नही चापानेर ।
जिसउ जालहुर जाणीइ, तिसउ नही भाभेर ॥७॥

माडवगढ तिसउ नही, तिसउ नही सालेर ।
जिसउ जालहुर जाणीइ, तिमउ नही मूलेर ॥८॥

॥ चउपई ॥

वसइ नगर गिरि ऊपरि घणउँ, किसू वर्णवउ तलहटी तणउ ।
वेद पुराण शास्त्र अभ्यसइ, इस्या विप्र तिणि नयरी वसइ ॥९॥

विद्यावाद विनोद अपार, विनय विवेक लहइ सुविचार ।
राजवश वसइ छत्रीस, छिन्नू गुण लक्षण बत्रीस ॥१०॥

चाहूआण राउ तिणिठाइ, अबला विप्र मानीइ गाइ ।
छत्रीसइ दडायुध धरइ, हीण कर्म को नवि आचरइ ॥११॥

च्यारि वर्ण उत्तम जाणीया, विवहारीया वसइ वाणीया ।
वुहरइ वीकइ चालइ न्याय, देसाउरि करइ विवसाय ॥१२॥

जलवट थलवट चिहु दिसि तणी, वस्त विदेसी आवइ घणी ।
वीसा दसा विगति विस्तरी, एक श्रावक एक माहेसरी ॥१३॥

फडीया दोसी नइ जवहरी, नामि नेस्ती कामइ करी ।
विविध वस्तु हाटे पामीइ, छत्रीसे किरीयाणा लीइ ॥१४॥

नगरि माडवी वारु पीठ, आछी षेरा चोल मजीठ ।
पाडसूत्र पटूआ सालवी, वुहरइ वस्त अणावइ नवी ॥१५॥

कसारा नट नाणुटीआ, घडिया घाट वेचइ लोहटीजा ।
कागल कापड नइ हथियार, साथि सुदागर तेजी सार ।।१६।।

तल्या सूपडा तोलइ मान, नागरवेलि अणीआला पान ।
इणिपरि वस्त विकाइ वहू, जे जोईइ ते लाभइ सहू ।।१७।।

घडी घडी घडीयाले सान, राति दिवस नु लाभइ मान ।
चहुटा चउक चउतरा घणा, ठामि ठामि माडइ पेपणा ।।१८।।

सेरी साथ मोकली वाट, नगर माहि छोह पकित हाट ।
घाची मोची सूई सूतार, वसइ नगर माहि वर्ण अढार ।।१९।।

गाछा छीपानइ तेरमा, विवसाईया वसइ नगरमा ।
जापापणि काजि सहु मिलइ, चहुटइ हईइ हईउ दलइ ।।२०।।

आसापुरी आदि योगिनी, देव चतुर्मुख गणपति अनी ।
कान्ह स्वामि गिरूआ प्रसाद, शिषर तडोवडि लागु वाद ।।२१।।

आठ पुहर नितपूजा करइ, ईडे ध्वजा वस्त्र फरहरइ ।
वलतइ वारि हुइ नितुजात्र, नाटक नृत्य नचावइ पात्र ।।२२।।

पूरइ प्रत्या ध्याइ लोक, भूष दूष नइ टालइ शोक ।
जोइ जिणाला ठाम विसाल, वसही देहरा नइ पोसाल ।।२३।।

गढ ऊपरि जल ठाम विसाल, झालर वावि कुड जावालि ।
वारू वावि माडही तणी, साहण-वावि अति सोहामणी ।।२४।।

राणी तणी वावि गभीर, नटरष वावि निरमल नीर ।
सोभित बुर्ज बुर्ज काकरउ, नदी तरूअर ऊमाहरउ ।।२५।।

माल्हा चउकी करहडी जाणि, कान्हमेर स्यडउ वपाणि ।
साल्हा वाडी तरूअर चग, राय तणउ छइ मडप रग ।।२६।।

जीणइ वसइ जालउरउ कान्ह, राज ऋद्धि छइ इद्र समान ।
राम पोलि अतिरुलियामणी, त्रिणइ पोलि तलहटी तणी ।।२७।।

पोलि फूटरी पाटण तणी, चीत्रुडी नइ ढीली तणी।
बारी पोलि भलेरउ भाव, कुअर तणउ तलहटी तलाव ॥२८॥

सूदर नाम तलावह जेउ, भोलेलाव कचोली वेउ।
पाणी तणी पर्व अपार, सहू को माडइ सत्रूकार ॥२९॥

जे पहिरइ मुद्रा काथडी, आवइ जती जोगी कापडी।
देसतरि पषीया भाट, अन्न अवारी पूछइ वाट ॥३०॥

तरुअर छाह परस चउवटे, राउत रमइ नितु जूवटे।
नगर नायका रूप अपार, नितु नितु करइ नवा सिणगार ॥३१॥

तास तणा मदिरि वीसमइ, भोगी पुरुष तेहस्यू रमइ।
वावि सरोवर वाडी कूआ, नगर निवेसि ढलइ ढीकूआ ॥३२॥

गढ गिरुउ जिसउ कैलास, पुण्यवत नउ ऊपरि वास।
जिसउ त्रिकूट टाकणे घडिउ, सपत घात कोसीसे जडिउ ॥३३॥

घणी फारकी विसमा मार, जीणइ ठामि रहइ जूझार।
झूझ बाणनी समदावली, विसमा वार वहइ ढीकुली ॥३४॥

गोला यत्र मगरवी तणा, आगइ गढ ऊपरि छइ घणा।
ऊपरि अन्न तणा कोठार, व्यापारीया न जाणू पार ॥३५॥

माणिक मोती सोना सार, गढ माहि गरथ भरिया भडार।
टाका वावि भर्‌या घी तेल, वरस लाष पहुचइ दीवेल ॥३६॥

जूना सालणा सूका षड, ईधण भणी घणा लाकड।
जालहुर गढ विसमउ घणउ, चाहूआण राय नू बइसणउ ॥३७॥

यह रचना सवत् १५१२ की है, इसका रचयिता अवश्य ही राजवश से सबन्धित था जिसने विश्वसनीय ऐतिहासिक तथ्यो पर प्रकाश डाला है। जब गुजरात पर आक्रमण करने अलाउद्दीन की सेना जा रही थी तो वीर कान्हडदे ने मार्ग देना अस्वीकार कर दिल्ली सल्तनत से शत्रुता मोल ले ली थी पर सोमनाथ और गुजरात को तहस नहस कर वह मारवाड की ओर बढी तो सोनगरा चौहान

सेना ने वीरता पूर्वक मुकावला करके शाही सेना को असफल कर दिया सुल्तान ने पुन आक्रमण करना तय किया और उसने समीयाणे पर आक्रमण किया। कान्हडदे ने अपने भतीजे शीतलसिह की भरपूर सहायता की और शाही सेना को हरा दिया। सुल्तान ने दूसरी वार समियाणा पर स्वय सदल वल आक्रमण किया और सात वष डेरा डाले रहा अन्त मे गो मास से जलाशय को अपवित्र करने के कुत्सित उपाय से उस पर आविपत्य कर लिया। फिर उसने आधीनता स्वीकार करने के लिए कान्हडदे के पास प्रस्ताव भेजा जिसे अस्वीकार करने पर अलाउद्दीन ने जालोर पर आक्रमण किया और जालोर के समीप ही शाही सेना ने पडाव डाला। इस समय सुल्तान के साथ उसकी शाहजादी फिरोजा भी थी जो कान्हडदे के कुमार वीरमदे के गुणो की प्रशसा सुनकर उस पर पूर्णतया आसक्त हो गई थी सुलतान अलाउद्दीन ने विवाह का प्रस्ताव कान्हडदे के पास भेजा जिसे उसने सर्वथा ठुकरा दिया। सुलतान ने जालोर पर घेरा डाल दिया पर वह असफल होकर दिल्ली लौटने लगा। कुमारी फीरोजा वीरमदे का दर्शन करना चाहती थी अत वह थोडी सी सेना के साथ गढ मे गई। कान्हडदे ने उसका स्वागत किया। वीरमदे भी उससे मिला अवश्य पर उसने शाहजादी फीरोजा द्वारा स्वय किये हुए विवाह प्रस्ताव को जाति मर्यादा की रक्षा के हेतु अस्वीकार कर दिया। राजकुमारी ने जालोर घूम-फिर कर देखा, कान्हडदे ने उसे प्रचुर मात्रा मे भेंट देने के साथ ससम्मान विदा किया। अलाउद्दीन इस आतिथ्य से प्रभावित होकर राजधानी लौट गया।

आठ वर्ष वाद फिर अल्लाउद्दीन की सेना ने जालोर पर आक्रमण किया। इस वार शाहजादी फिरोजा स्वय न आकर अपनी धाय को सेना के साथ भेजा और उसे जीवित वीरमदे को वन्दी वनाकर लाने का कहा यदि वह वीरगति प्राप्त हो जाय तो उसका मस्तक वह ले आवे।

जालोर पर घेरा डाला हुआ था, चार वर्ष युद्ध चला। मालदेव और वीरमदे ने कडा मुकावला कर शाही सेना के छक्के छुडा दिए। किन्तु भण्डार रिक्त हो गया तो प्रजा ने स्वदेश के लिए पूर्ण सहायता की जिससे आठ वर्ष और शत्रु का सामना किया। वारह वर्ष युद्ध करने के अनन्तर दुर्भाग्य वश प्रलोभन मे आकर सेजवाल वीकम द्वारा शाही सेना को गुप्त मार्ग का पता लग गया जिससे वह दुर्ग मे प्रविष्ट हो गई। सेजवाल की स्त्री हीरादेवी ने अपने देशद्रोही पति को अपने हाथ से मार डाला और राजा को सूचना दे दी। राजपूत सेना थोडी ही रह गई थी। फिर भी वीरतापूर्वक लडते हुए कान्हडदे मारा गया, वीरमदे ने साठ दिन तक युद्ध किया अन्त मे रानियो ने जौहर किया और वीरमदे ने शत्रु के

हाथ न मर के स्वय कटार अपने उदर मे भोंककर भी शत्रु पक्ष के अनेक सामन्तो को मार कर प्राण त्यागे। फीरोजा की धाय ने उसका मस्तक ले जाकर उसे भेंट किया। राजकुमारी फीरोजा उसकी वीरता से मुग्ध तो थी ही उसने यमुनातट पर जाकर सिरके साथ कूदकर नदी मे जल समाधि लेली और अपने मनोनीत प्रियतम के साथ सच्चे प्रेम का प्रमाण प्रस्तुत कर आत्म विसर्जन कर दिया।

राठौड़ वंशावली के नवकोटो की विगत मे—

आठमो कोट जालोर पमार भोज रो वैसणो छै। भाखर ऊपर वडो गढ छै। माहे झालर वाव अखूट पाणी छै। घास वलीता नै घणी ठौड छै पाखती कलस जलधरीनाथ बेवडा भाखर छै सहर हेठै बसै छै सह दोलो कोट छै तलाव बावडी वडी जायगा छै गाव ३६० लगै छै। डोडीवाल, सीवाणो, रामसेण, लोहीयाणो, बडगाव, गू दाऊ, राडधडो इतरा तो परगना लागै छै धरती माहे रजपूत मैणा, भील रहै छै। बडी बाधी जायगा छै घणी उनाली परगनै नीपजै छै। जोधपुररा धणी रो राज छै ।।८।।

स० १३०१ कानडदे सोनिगरै जालधरीनाथरी दवा सु सोवनगिरि उपर गढ करायो। जालधरीनाथ जोगी रे नावै आवै पहाडरो नाम जालधर कहीजै छै। स० १३१५ बैशाख सुदि ९ जालोर गढ भागो कानडदे वीरमदे राणगदे काम आया।

नोट—इसमें उल्लिखित सवत गलत है, ईस्वी सन् होतो फिर भी वास्तविकता से निकट आ सकता है।

प्राचीन तीर्थमालाओं में स्वर्णगिरि जालोर

प्राचीन तीर्थमालाओ मे सहस्राब्दि से स्वर्णगिरि-कनकगिरि-स्वर्णशैल आदि अनेक पर्यायवाची नामो से इस महातीर्थ को नमस्कार किया गया है। खरतर-गच्छ मे प्रात कालीन प्रतिक्रमण मे बोले जाने वाले "सद्भक्त्या" संज्ञक सकल तीर्थनमस्कार मे 'कनकगिरौ' और 'स्वर्णशैले' नाम दो वार आये हैं जिनमे से एक नाम इसी स्वर्णगिरि को उद्देश्य कर लिखा है। स्वर्णशैल नाम निम्न पद्य मे है—

श्री शैले विन्ध्यशृंगे विमलगिरिवरेह्यर्वुदे पावके वा
सम्मेते तारके वा फुलगिरि शिखरेऽष्टापदे स्वर्णशैले
सह्याद्रौ चोज्जयन्ते विपुल गिरिवरे गूर्जरे रोहणाद्रौ
श्री मत्तीर्थंकराणा प्रति दिवसमहं तत्र चैत्यानि वन्दे ।।३।।

'सकलार्हत्' स्तोत्र के अन्तिम पद्य मे जो प्रसिद्ध गिरि तीर्थ वतलाए हैं उनमे सुवर्णगिरि का कनकाचल नाम से उल्लेख किया गया है। यत

"ख्यातोऽष्टापद पर्वतो गजपद सम्मेत शैलाभिध
श्रीमान् रैवतक प्रसिद्ध महिमा शत्रुञ्जयो मण्डप
वैभार· फनकाचलोऽवुर्दगिरि श्री चित्रकूटादय
स्तत्र श्री ऋषभादयो जिनवरा कुर्वन्तु वोमङ्गलन् ।।"

अब तेरहवी शती के जैनाचार्य श्री महेन्द्रप्रभसूरि कृत तीर्थमाला वृत्ति का महत्त्वपूर्ण विराट उल्लेख देखिए—

बहुविह अच्छरिय निही रहोल पडहोल पयड मादिव्वो।
वलभिव्वगाइ दुम्मिवि जालउरे वीरजिण भवणे ।।८६।।
नवनवइ लक्ख धणवइ अल्द्धवासे सुवण्णगिरिसिहरे।
नाहड निय कालीण थुणि वीर क्खवमहीए ।।८७।।

तह चिर भवणे बीए वदे चदप्पह तओ तइए
पणय जण पूरियास कुमर विहारमि सिरि पास ॥८८॥

टीका—जावालिपुरे श्री वीरजिन भवने अति वहु आश्चर्य निधि रथोवर्त्तते तत्र तदा रथयात्रा प्रवर्त्ततेस्म सच रथ सज्ज स्वयमेव उपरि निविष्टाया श्री वीर मूर्त्तौ स्वयमेव पुरमध्ये सचरति प्रकट सादिव्य प्रकटातिशय पटहश्चास्ति सच पटहो रथयात्राया अवादित स्वय पुरो गर्जते द्वौच वलभृत्यौ पुरुष रूप प्रतिभाधरौ वृषभ स्थाने भूत्वा रथयात्राया रथ वाहयत इति ॥८६॥ सुवर्णगिरि शिखरे यक्ष वसति नाम प्रासादे नाहड नृप कालीन नाहड नृप वारके प्रतिष्ठित वीर श्री वर्द्धमान स्तुति विषय कुरु कि० वि० सुवर्णगिरि शिखरे नवनवति लक्ष धनपत्य लब्ध वासे नवनवति लक्ष प्रमाण धनस्य पतिभि अलब्धो वासो यत्र यदाहि नाहड नृप वारके ९९ लक्ष धन स्वामिन सुवर्णगिरि शिखरे वास न प्रापुः कोटि-ध्वजा एव तत्र तदाऽवसन्नेति ॥८७॥ यथा द्वितीये चिर भवने चिरतन प्रासादे चद्रप्रभु वदे ततस्तृतीये भवने पुन कुमरविहारे कुमारपाल नृप कारित प्रासादे प्रणत जन पूरिताश पार्श्व वदे प्रणताना जनाना पूरिता सिद्धि नीता आशायेन ॥८८॥

जैन सत्यप्रकाश वर्ष १९ अक ४-५ मे प्रकाशित मुनिप्रभसूरि कृत अष्टोत्तरी तीर्थमाला मे—

मगल नमिवउ नव पल्लव, सोवनगिरि समरी
सफलउ भव, करिवउ कुकुमलोलो ॥१०॥

उ० विनयप्रभ कृत तीर्थयात्रा स्त० (गा० २५) जैन सत्यप्रकाश वर्ष १७-१।

वाहडमेरिहिं रिसह सति जालउरहिं वीरो।
सिरि साचउरिहिं भीमपल्लो वायड़पुरि वीरो ४

स० १४७७ मे हेमहसमूरि लिखित मातृकाक्षर चैत्य परिपाटी मे—

जीराउलि जालउरि जूनइगढ जिण जाल्हरे।
जिणहर जिणह विहारि जालधरि जमणा तड़िहि ॥११॥

श्री सिद्धसेनसूरिकृत सकल तीर्थ स्तोत्र गा० ३२ मे—

सम्मेय सेल सेत्तुज्ज उज्जले अब्बुयमि चित्तउड़े।
जालोरे रणथभे गोपालगिरिम्मि वदामि ॥१९॥

तपा जयसागर कृत तीर्थमाला (जैन सत्य प्रकाश वर्ष २२ अक ८) से—

भवियण जोधपुर जालोर भिन्नमाल मा ते जिन नमी आतम तार ।

प्राचीन तीर्थमाला सग्रह भाग १ के अवतरण—

प० महिमा कृत चैत्य परिपाटी (पृ० ५८) मे—

जालुर गढ मा सुदरू रे, देहरा छि उत्तुग रे च०
सहिस दोय इकताल स्यु रे लाल, प्रतिमास्यु मुझ रग रे च०
सोवनगिरि मा साहिवा रे, उपरि त्रण्य प्रसाद रे च०
पच्यासी प्रतिमा कहु रे लाल, भमराणीइ उल्हास रे च०

शीलविजय कृत तीर्थमाला (पृ० १०३) से—

जालोर नगरि गजनीखान, पिशुन वचन प्रभु धरिया जान ।
वजरग सघवी वरीउ जाम, पास पेखि नइ जिमस्यु ताम ॥२५॥

स्वामी महिमा धरणेन्द्र धर्यो, मानी मलिक नि वलो वसि कर्यो ।
पूजी प्रणमी आप्या पास, सघ चतुर्विध पूगी आस ॥२६॥

स्वामी सेवा तणि सयोगि, पाल्ह परमार नो टलीओ रोग ।
सोल कोसीसा जिनहरि सरि, हेम तणा तिणिकीधा घरि ॥२७॥

श्री ज्ञानविमलसूरि कृत तीर्थमाला (पृ० १३६) मे—

सोवनगिरि तिहा निरखियो ए, जे पहिला जिन ठाम ।
विविध देहरा वदिया निरमालडी ए प्रणम्यां ते अभिराम मनरहिए ॥४२॥

श्री मेघविजय कृत पार्श्वनाथ नाममाला (पृ० १५०)

जालोरउ जगि जागइ जी, मडोवर मन लागइ जी ।

प० मेघ विरचित तीर्थमाला (पृ० ५४)

श्री जालउरि नयरि सोनवालि, एक विप्र विहु नद विचालि ।

प० कल्याणसागर कृत पार्श्वनाथ चैत्य परिपाटी (पृ० ७०)

जालोरै जग जागतो, सरवाडै हो सेवक साधार ।

रत्नाकर गच्छीय हेमचद्रसूरि शिष्य जिनतिलकसूरि कृत सर्व चैत्य परिपाटी मे—

घाल्पी फलउधी सामीय पास, जालउरी नागउरी जइ उची पास ।
कलिकुडि घाणारसी महुरी पास, सचराचरि जगधिउ पूरइ आस ॥२५॥

ज्ञाननिधान कृत पार्श्वनाथ स्तवन मे—

जीराउलि जालोर उजेणो, फलवधि रावण इम वहु लोणो, नमियइ पासकुमार ॥

श्री नगर्षि कृत

जालुर नगर पंच जिनालय चइत्य परिपाटी*

श्री गुरु चरण नमी करी, सरसति समरीजइ,
कवियण[1] माडी तु भली, निरमल मति दीजइ,
हरख धरी हु रचिस्यु हेव वर चियपरिवाडी,
मन वछित सुख वेलि तणी, वाधइ वरवाडी ॥१॥

सोहइ[2] जवूदीप भलु जिम सोवन-थाल,
लाबु जोयण लाख एक, तेनु सुविशाल,
ते वचि मेरु महीधरू, जोयण लख तुग[3],
भरतखेत्र दखिण दिशि, तेह थी अति चग[4] ॥२॥

मध्यम खडि नयर घणा, नवि जाणु पार,
श्री जालुर नयर भलु, लखिमी भडार,
सोवनगिरि पासइ भलु, वाडी बन सोहइ,
वनसपती बहु जाति भाति, दीठइ मन मोहइ ॥३॥

मढ मदिर पायार[5] सार, धनवत निवेस[6],
न्यायवत ठाकुर भलु, जाणइ सविसेस,
सावय[7] सावी[8] धरमवत, दातार अपार,
दयावत दीसइ घणा, करता उपगार ॥४॥

*जैन सत्य प्रकाश वर्ष १० अक ६ मे श्री अबालाल प्रेमचद शाह सपादित ।
१. कविजन २ शोभित ३ ऊचा ४ सुदर ५ प्राकार-गढ ६ घर ७ श्रावक ८. श्राविका

॥ ढाल ॥

हिव बीजइ[2] जिण मदिरि जास्यु भाव थी रे अति मोटइ मडाणि,
थुणस्यु नेमि जिणेसर राजीउ रे ॥१२॥

समुद्रविजय भूपति[17] कुलगयण दिणेसरू[18] रे, माता शिवादेवी पूत,
सोहइ रे सोहइ रे, राजीमती वर सुदरू रे ॥१३॥

मस्तक मुकुट विराजइ रे, हेम[19] रयण तणु रे काने कुडल गार,
झलकइ रे झलकइ रे, रवि शशि मडल जीपता रे ॥१४॥

हियइ[20] हार तिम बाहि, अगइ दीपतारे अवर विभूषण सार,
पेखी रे पेखी रे, सघ सहु मनि हरखीउ रे ॥१५॥

जाणे धन घनसार[21] सुधारस नीपनी रे, कय निज जस घन पिड,
सोहइ रे सोहइ रे, नेमि जिणेसर मूरती रे ॥१६॥

चउसय[423] तेडोतर[22] जिन प्रतिमा सोभतू रे, नेमि जिणद दयाल,
वदु रे वदु रे, भवियण भाव धरी सदा रे ॥१७॥

॥ ढाल ॥

गीत गान नाटक करी, नेमि भवन थी वलिया रे,
त्रीजइ[3] जिणहरि मनिरली, जाता बहु सघ मिलिया रे ॥१८॥

जय जय सति जिणेसरु नमता विघन पुलाया[23] रे
पूजता सकट टलइ, शुभ ध्यानि चित्त लाया रे
जय जय सति जिणेसरू, आचली,

हथणाउर[24] पुर सुदरू, विम्ससेन[45] भूपाला रे,
तस कुल-कमल-दिवाकर, सयल जीव रखवाला रे जय जय ॥१९॥

---

१७. राजाओ के समुदाय रूप आकाश मे १८ सूर्य १९ स्वर्णरत्न २० हृदय पर २१ कपूर २२ ४१३ २३ दूरहटे २४ हस्तिनापुर २५. विश्वसेन

एक पसू[२६] नइ कारणि, निज जीवित नवि गणीया रे,
पगिलागी सुर वीनवइ, साचा सुरपति थुणिया[२७] रे   जय जय ॥२०॥

अचिग वूखि सरोवर, राजहंस अवतरिया रे,
तीणी अवसरि रागादिकू, श्री जिनइ अवहरिया[२८] रे   जय जय ॥२१॥

भवभय भजन जिन तू सुणी, लछण मसि[२९]पगि लागु रे,
मिगपति वीहतु मिग सही, हिव मुझ नइ भय भागु रे   जय जय ॥२२॥

तुझ गुण पार न पामीइ, तू साहिब छइ मोरा रे,
जे तुम सेव करइ सदा, ते सुख लहइ भलेरा रे   जय जय ॥२३॥

इक[३०] सत पणवीसय[१२५] भत्ती, सति सहित जिन प्रतिमा रे,
भावधरी जे वादिसिइ, ते लहसीइ वर पदमा[३१] रे   जय जय ॥२४॥

॥ ढाल ॥

चउथइ[४] जिणहरि हेव, भाव धरी घणु, जास्यु अति उलट धरी ए,
नमस्यु प्रथम जिणद, विधि पूरव सदा, तीन पयाहिण म्यु करी ए ॥२५॥

नाभि भूप कुलचद, माता मरुदेवा उयरि[३२] सरोवर हंसलु ए,
अवतरिउ जगनाह, त्रिहु नाणे करी, पूरउ निरमल गुण निलु ए ॥२६॥

पढम जिणद दयाल, पढम मुणीसर, पढम जिणेसर जगधणी ए,
पढम भिखाचर[३३] जाणि, पढम जोगीसर, पढम राय तू बहुगुणी ए ॥२७॥

आदि जिणेसर देव, मूरति तुम तणी, भविजन नइ सुख-कारिणी ए,
रूप तणु नही पार, तेजि त्रिभुवन, त्रिभुवन मोहीइ ए ॥२८॥

तू ठाकुर तू देव, तू जगनायक, जगदायक तू जगगुरु ए,
माय[३४] ताय[३५] तू मीत[३६], परम सहोदर, परम पुरुष तू हितकरु ए ॥२९॥

[७१]एकोत्तिरि[३७] जिण-बिंब, तिणि करि सो भती, रिषभदेव तुझ मूरती ए
जे वादइ नरनारि प्रहउठी सदा, ते जाणज्यो सुभमती ए ॥३०॥

---

२६. पशु-कबूतर के २७. स्तवना की २८ अपहरित किया २९. बहाने ३० एक सौ पचीस ३१ श्रेष्ठ लक्ष्मी ३२ उदर ३३ भिक्षाचर-भिक्षु ३४ माता ३५ पिता ३६ मित्र ३७ इकहत्तर

॥ ढाल ॥

पचम[5] जिणहरि जायस्यु रे, जिहा छे पास जिणद,
कु कुमरोल नमु सदा रे, जिमघरि कु कुमरोल, जिणेसर तू महिमावत ॥३१॥

सोवन सम तुझ मूरती रे, सपत[38] फणामणि सोभ,
जे तुझ नाम जपइ सदा रे, ते पामइ नवि खोभ[39] जिणे० ॥३२॥

सायणी[40] डायणी[41] जोयणी[42] रे, भूत प्रेत न छलति[43],
रोग सोग सहु उपसमइ रे, जे तुझ पूज[44] करति जिणे० ॥३३॥

घरणराय पदमावती रे, अहोनिशि सारे सेव,
ठामि ठामि तू दीपतु रे, तुझ समवडि नहि देव जिणे० ॥३४॥

तुझ गुण पार न पामीइ रे, तू छइ गुण भडार,
जे तुम सेव करइ सदा रे, ते पामइ सुखसार जिणे० ॥३५॥

॥ ढाल ॥

चिइपरिवाडी जे करइ माल्हतडे, प्रहऊगमतइ सूर[45], सुणिसुंदर प्रहऊ०,
बोधि बीज पामइ घणु ए मालतडे तस घरि जय सपति पूर सुणि० ॥३६॥

तस घरि उछव नवनवाए मालतडे तस घरि जय जयकार,
तस घरि चिंतामणि फल्यु मालतडे ते जाणु सुविचार सुणि० ॥३७॥

ससि रस वाण ससी (१६५१) सुणुए मालतडे, ते सवच्छर जाणि,
भादव वदि तइया[46] भलीए मालतडे, सुरगुरुवार वखाणि सुणि० ॥३८॥

॥ कलश ॥

नयर श्री जालुर माहै, चइत परिपाटी करी,
ए तवन भणता अनइ सुणता, विघन सव जाइ टरी[47],
तपगच्छ नायक सुमतिदायक, श्री हीरविजय सूरीसरो,
कवि कुशलवरधन सीस पभणइ, 'नगा' गणि वछिय करो ॥३९॥

॥ इति श्री जालुर नगर पच जिनालय चइत्य परिपाटी ॥

---

(७१) ३८. सात ३९. क्षोभ ४० शाकिनी ४१. डाकिनी ४२. योगिनी ४३. छल-कपट करे ४४. पूजा ४५. सूर्य ४६. तृतीया ४७ टलजाय

श्री मतिकुशल कृतम्

जालोर मण्डण षट् जिणहर स्तवनम्

दूहा—सोरठा

सकल सदा सुखदाय, सानिधकारी सेवका।
जालोरे जिनराय, षट् [1]जिनहर नमु खतिस्यु ॥१॥

पारसनाथ प्रसिद्ध, महावीर नेमीसरु।
शांति ऋषभ दे सिद्ध, परता पूरं पासजी ॥२॥

राग-सोरठ ढाल—धनरी सोरठी

आज दिवस ऊगो भलो हे सहीया, पेख्या पारसनाथ।
मन गमतो आवी मिल्यो हो जी, सूधो शिवपुर साथ ॥३॥

प्रणमो पासजी, वहिनी वदो हे भावसु भगवान। आकणी ॥
आरति दुख दूरे गया हे सहीया, प्रगटयो पुण्य पडूर।
भव भय भागो भेटीया हो जी, हरख्यो जाय हजूर ॥४॥प्र०॥

ढाल—मनहर लाहो लोज हो साहिबा

जिनवर नाम सुणीनें हो हरखीयो, वीरा मे महावीर जि०
अरीय उवेख्या हो आपणा, हिव करि माहरी भीर जि० ॥५॥

महिर करीजै हो मोपरा, माहरी तो परि नाठ जि०।
मात पिया नें हो मुकि नें, छोरू जाइ रिहा छाड जि० ॥६॥

तैं अपराधी हो तारीया, हिव करि माहरी सार जि०।
पर उपगारी हो तु नही, तारिक विरूद चीतारि जि० ॥७॥

ढ़ाल—अलबेलौ ह़ाली हल खड हो

नेम जिणेसर निरखीयौ हो, हरखीयौ माहरौ चीत ।
मुगति महेली मेलिवा मोनै मिलियौ हो मन मेलू आवी मीत ।।८।।

सहू आस फली मन माहिली हो, मोनै मिलियौ हो अतरजामी आइ ।सहू०
विण कहीया मन वातडी हो, जाणै उपजै जेह ।
भाग्य उदै मैं भेटीयो, सहुवछित पूरण सामी एह ।।९।।सहू०।।

ढाल—मुखनै मोती ल्याज्यो राज मुखनै मोती ल्याज्यो

काइ माहरी मुदित करेज्यो राज, माहरी मुदित करेज्यो ।
निज तन दान देइ नै राख्यौ, पूरब भव पारेवौ ।
एह विरुद साभलि हू आयौ, हिवमुझ सुजस गहेवौ राज ।।१०।।मा०।।

सरणै राखौ सति जिणेसर, एहिज अरज अम्हारी ।
परम सनेही अतर परि हरि, वलिजाऊ बार हजारी राज ।।११।।मा०।।

ढाल—झिरमिर वरसै मेह झरोखै कोइली हो लाल झ०

पाचमै भवणै प्रथम जिणेसर पेखीयौ हो लाल जि० ।
मानव जनम प्रमाण मैं आज ए लेखीयौ हो लाल मैं० ।
मरुदेवी सुत महियल महिमा सागरु हो लाल के म० ।
सुध समकित रो आज आखा तुझ आगरू हो लाल आ० ।।१२।।

पय जुग प्रवहण रूप भवोदधि तारिवा हो लाल भ० ।
मुझ नै मिलियौ आइ, सयल दुख वारिवा हो लाल स० ।
आज सर्या सहु काज, निवाज्यौ करि दया हो लाल नि० ।
मन सुध श्री महाराज करी मोपरि मया हो लाल क० ।।१३।।

ढाल—पंथीड़ानो

आस्या पूरण मिलीयो पासजी रे, दाइक देवा अविचल राज रे ।
कचन नी परि कसवटीयै कस्योजी, कोडि समारै वछित काज रे ।।१४।।

आज मनोरथ फलीया माहरा रे, पायौ पूरब भवनौ साम रे ।
सेवा सफली थासी एहनी रे, महीयल वधसी माहरी माम रे ।।१५।।आज०।।

परतो पूगो पहिली पास नो रे, सेवा थी लह्या लील विलास रे।
हिव वलि चरण गह्या प्रभु ताहरा रे, पूरो वञ्छित पास उल्हास रे ॥१६॥आज०॥

॥ कलश ॥

इम नम्या जिनवर परम हित घर, जालोरैं अति आसता।
नव निद्ध नमता दीयैं इण भव, परभवैं सुख सासता॥
सवत सतरैं सैं सतावीस (१७२७) जेठ सुदि चवदिस दिनैं।
मतिकुशल श्री महाराज भेटया, मानव भव सफलो गिणैं॥१७॥

॥ इति श्री जालोर मडल पट् जिणहर स्तवन समाप्तम् ॥

श्री पार्श्व जिन स्तवन

राग-सारग ढाल—पथीड़ानी

मुझ मन भमरो तुझ गुण केतकी रे अटकाणो पल दूरि न जाइ रे।
मूरति मोहै मोहनवेलडी रे, निरखता खिण तृप्ति न थाइ रे॥१॥मु०॥

पूनिम सिस मुख सोहै स्वाम नो रे, दीपशिखासी नासा एह रे।
अधर प्रवाली सम रग जाणीयइ रे, अणीयाली अखडी बहु नेह रे॥२॥मु०॥

सकध कलस सोहै अति देवना रे, कानैं कुडल सिसिहर सूर रे।
सपत-फणामणि दें सुख सासता रे, पास नम्या पातिक सहु दूरि रे॥३॥मु०॥

तु रेवा हु गैंवर सम सही रे, हु केकी तू मेह समान रे।
तु चदो हु चकोर तणी परैं रे, चकवी चित्त चाहै ज्यू भान रे॥४॥मु०॥

हस तो मानसरोवर छोडि नैं रे, नवि जायैं किण सरवर पास रे।
तिम हू हरिहरादिक देव नैं रे, नवि सेवु धरि मन उल्हास रे॥५॥मु०॥

निहचो एक कियो मैं एहवोरे, भव भव तु हिज देव प्रमाण रे।
जो तिल फूड कहु इण अवसरैं रे, तो मुझ तुमची आण रे॥६॥मु०॥

चोल मजीठ तणी पर माहरो रे, मन लागो तोस्यु इकतार रे।
मतिकुशल कहै कर जोडी करी रे, अवसरि करज्यो अम्हची सार रे॥७॥मु०॥

॥ इति श्री पार्श्व स्तवन समाप्तम् ॥

लावण्यसागर कृत

श्री सोवनगिरि महावीर जिन स्तवन

वीर जिणेसर जगि राया, सोवनगिरि ऊपरि मे पाया।
लोचन दोय अमी लाया, जब साहिब मुझ निजरें आया ॥१॥

खत्रीकुण्ड नयरें जाया, सीधारथ राय रें कुलि आया।
त्रिशला नदन मैं ध्याया, सब इद्र इद्राणी मिल गाया ॥२॥

सवत सोल इक्यासीयें, जयमलजी हीयें विमासीयें।
मुहूरत परितिष्ठा वेला, बहु पडित जन कीधा भेला ॥३॥

सघ सहु नें श्रीफल आपी, चैत्री बदि पचमि दिन थापी।
जयसागर पडित राया, परतिष्ठा करि बहु सुख पाया ॥४॥

जालोर नयर नी पूगी ज रली तिहा परतिख दीसे सरग पुरी।
जालोर नगर नो सघ भावी, पूजो प्रतिमा ऊपरि आवी ॥५॥

सात आठ मिली टोली, श्री वीर भुवन फिरे दोली।
मुहणोत जसा नो सुत जीवो, तें कलियुग मे थाप्यो दीवो ॥६॥

मेघ तणी परि तु वरसें, सोवनगिरि लिषमी तु खरचे।
काने कु डल दोय लाया, जाणे चद सूरिज सरणे आया ॥७॥

चद्रूआ सखरा लाया, जाणे मुखमल सु मडप छाया।
तुझ गुण जेहणें मन वसीआ, सो नरनारी आ सरणे आया ॥८॥

पापीरा तु मद चूरो, पुण्यवत नी तु परता पूरे।
साहिव सुणि इक वीनति मोरी, भवि भवि देयो सेवा तोरी ॥९॥

॥ कलश ॥

इह अकल मूरति सकल सूरति सोवन गिरिवर थापना।
गर्जमिह राजें तूर वाजें नहिअ कारिज पापना॥
विजेदेवराया मुझ सुहाया सेवा करीयें पायनी।
मुहणोत जयमल शिखर चोहड्यो सेवा सफली सामनी॥१०॥

पंडित में परधान दिनकर जेंसागर पंडित जती।
तस नाम लेता रिदय धरता पाप न रहे एका रती॥
श्री वीर देख्या पाप नासें अग नासें आपदा।
लावण्यसागर एम जपे देज्यो सगली सपदा॥११॥

॥ इति श्री महावीर स्तवन ॥

[पत्र १ अभय जैन ग्रंथालय नं० ११९९०]

कवि पल्हु आदि कृत षट्पदानि से शांतिनाथ वर्णन

सो जयउ संतिनाहो, कासव कुल मंडणो कणय वन्नो
चालीस धणु पमाणो, जालउरे जयउ संतियरो॥१॥

करउ संति सघस्स संति जुगपवर जिणेसर
संति सयल लोयस्स संति उदयह नरेसर
अइरा देविहि जाइ राइ विससेणह नंदणु
पंचमु लच्छि परिचत्त जयइ जिण पाव विहंडणु
कम्मट्ठ करडि घड पंचमुहु भवियलोय भव भय हरण
जय जय जयहि जयहि जय संतियर संतिनाहसिवसुह करण॥५॥

विक्कमउरि जिण वीरु, पासजिणु जयसलमेरह
संतिनाहु सिरिमालि, पढम जिणु वाहडमेरह
विज्जाउरि वसुपुज्ज सामि झायहु तित्थेसरु
चंदप्पहु पल्हणनयरि सुमरहु परमेसरु
सोलसमु परमु जिणु जालउरि, नविय नमह दिढ चित्तु धरि
रिसहेसरु पणमहु चित्तउडि जिम न पडहु संसार सरि॥९॥

ज्ञानप्रमोद गणि कृत

श्री सुवर्णगिरि मण्डन पार्श्वनाथ स्तवनम्

विमल गुण निधान केवल श्री प्रधान मकल सुख विधान ज्योतिरच्यं दधान ।
दुरितभिदवधान श्रेयसासनिधान जिनमुपसम धान नौमि पार्श्वाभिधान ॥१॥

भविक कुमुदचन्द्रस्त्यक्त दोषो वितन्द्र प्रमद दम समुद्र पुण्य पद्मा सुभद्र ।
प्रणत सुरनरेन्द्र सौख्यकारी जिनेन्द्रो जयत नति दयार्द्रस्तर्ज्जितानङ्ग मुद्र ॥२॥

अश्वसेना वनीनाथ रम्याङ्गज पन्नगाधीश पद्माश्रिता हृय भुज ।
तत्वधीसौदधी पानु कार सदा भव्य सत्वा विभु सश्रियछव मुदा ॥३॥

इन्द्रनीलङ्ग वर्ण निरहस्तत वासवाचार्य वाचा मगम्य स्तुत ।
त्वासि माराधयति त्रिसछ्ययके पार्श्व धन्याह्य पास्तान्यकृत्पास्तके ॥४॥

सत्य विद्या तप श्री प्रणेताप्रधी रुग्र वशाबरा हर्मणि धीरधी ।
पार्श्व नाथो जनै नम्यते म प्राग्विलीनाथि मिथ्या तमो विभ्रम ॥५॥

द्रागभवाब्धिव्वुडज्जतु पोतोपम कोपथिछव विद्ध स पूषोत्तम ।
काम मुत्फुल्ल पद्मानन: पारग पार्श्व यक्षार्च्चित स्त्व जया को रग ॥६॥

वामोदरोदार सरोमराल तीर्थाधिराज सुयशो विशाल ।
ध्यायन्तिये त्वा परमात्म रूप भव्या लभन्ते प्रभुता स्वरूपम् ॥७॥

गीर्व्वाण धे कु काम प्र नात्वद ।
भावै विश्व पूजातिसया ॥८॥

र जनन व्रत केवल श्री सिद्युत्स वागल ... सुश्री ।
लोक नयी ? प्रमद वृन्द सुख प्रदानि कुर्याज्जिनो भविनृणा स समीहितानि ॥९॥

गाढ सठोग्र कमठोरु तपो तिधर्म्म निर्म्माथ पाथ उतभाषित शुद्ध धर्म्म ।
स्फूर्ज्जित्फणा मणि विभा विशथी कृतास पार्श्व प्रभुर्जयति सर्व्व जगत्प्रकास ॥१०॥

पग्म पुरुप नव हस्त तनु भगवत मनन्त गुण सुततु
नन पूरित काम म काम मिन प्रयता कृतिनो भजतार्यं जिन ॥११॥

रनकाद्रिपुग तुल चैत्य रमा वर भूपण पार्श्वं निरस्त तम
मरलानिमनोभिगतानिसता किल पूरय विश्व पते सुकृता ॥१२॥

इत्थ मुवणगिरि मण्डन पाश्वनाथो भक्त्या श्रुत सभविना महिमा सनाथ ।
श्री रत्नधीर सुगुरो रणु भावतस्तु ज्ञानप्रमोद गणिना प्रभुता प्रदोस्तु ॥१३॥

॥ इति श्री पार्श्वनाथ स्तवनम् ॥

श्री महावीर वोलिका

तागुज्जर नारिहि इह ससारिहि मणि हूयउ आणदु ।
ता तिसलहि नदणु कम्म विहडणु वदह वीर जिणिंदु ॥
ता कणयह कलसू अमियह वरिसू सु मइ मणहर दडु ।
ता सहियह दिट्ठइ पाऊ फिट्टइ रोरू जाइ सय खडु ॥१॥

ता वहिल सजोई तुरिय तिचोइ लग्गउ मणि उमाहु ।
ता धन्नु नयत्त दिवस सुमुहुत्तू जहि वदह जिण नाहु ॥
ता रिद्धिहि सहिती अगि नमती पहुती स परिवारि ।
ता वारहि सोहा जण मण मोहा जालउरह मज्झारि ॥२॥

ता पकय नयणी ससहर वयणी मुहि कुदुज्जल दत ।
ता पीण पओहरि सरस किसोयरि मयगल जिव मल्हति ॥
ता झयटि किज्झहि पडि पहिरिज्जहि कचुय ताडिय नेउ ।
ता माकुणि झीणी लाटक वीणी कज्जलि अगिय नेत्र ॥३॥

ता तिलय करेविणु धडइ रएविणु मुहि सुगधु तवोलु ।
ता मयमय चगी नव नव भगी मडिय ताइ कपोल ॥
ता पाए नेउर वाहा केउर कोटहि नव सरु हारु ।
ता नोयन चूडा पहिरहि रूडा वलया झणु झुणकार ॥४॥

ता चगो वाली पहिरहि पाली कनि कुडल झलिकति ।
ता कणयइ कटी रतनिहि खची वर खिंखिणि वज्जति ॥
ता नतिहि जुत्ती जिणहरि जति नयरह हूयउ खोहु ।
ता निहि सिणगारी मन्नोहारी मोहिउ सयलु वि लोउ ॥५॥

ता कारहि मडणु दोहग खडणु पहिरावणी सुरग ।
ता वलि मडावहि भोगु करावहि अगरि कपूर सुचगु ।।
ता अभउ दियावहि पूय रयाविहि वयणु भरहि कप्पूर ।
ता केलिहि खभा नच्चहि रभा वज्जहि नदिय तूर ।।६।।

ता घोडु कुदेविणु मगल देविणु हरिसिहि तिव नच्चति ।
ता रभा हरणी सुरवर घरणी जिम अज्जवि समरति ।।
ता गुज्जर रमणी सुहगुरु वयणी उच्छउ करहि सुरमु ।
ता मिलियउ लोऊ हुयउ पमोऊ जयउ जयउ जिण धम्मु ।।७।।

ता उदय-विहारू सारोद्धारू कारिउ कुलघरि मति ।
ता असुर सुरिंदा खयर नरिंदा पक्खिवि सीसु धुणति ।।
ता तासु पइट्ठा कियइ विसिट्ठा सीस धुणाविउ इदु ।
ता धम्म कहतू जगि जयवतू जिणिसरसूरि मुणिदु ।।८।।

।। श्री महावीर बोलिका समाप्ता ।।

मुनि जिनविजयजी के प्राचीन जैन लेख सग्रह से

जालोर-स्वर्णगिरि के अभिलेख

(१)

(१) (नाक्षा ?) त्त्रैलोक्य लक्षी विपुल कुल गृह धर्म वृक्षाल वाल श्री मनाभियनाथ क्रम कमल युग मगल वस्तनोतु। मन्ये नागल्यमाला प्रणत भव भृता निद्धि सौध प्रवेशे यस्य स्कन्ध प्रदेशे विलनति गवल श्यामला कु तलाली ॥१॥ श्री चाहुमान कुलावर मृगाक श्री महाराज अणहिलान्वयो द्भव श्री महाराज आन्हण सुत।

(२) यावली दुर्ललित दलित रिपु वल श्री महाराज कीर्त्तिपाल देव हृदया नदि नदन महाराज श्री समरसिंह देव कल्याण विजय राज्ये तत्पाद पद्मोपजीविनि निज प्रौटिमा तिरेक तिरस्कृत सकल पीन्वाहिका मडल त [स्क] र व्यति करे राज्य चिन्तके जोजल राजपुत्रे इत्येव काल (ले) प्रवत्तमाने।

(३) [f] रघुकुल कमलेन्दु पुण्य लावण्य पात्र नय विनय निधान धाम सौंदर्य्य लक्ष्म्या धरणि तल नारी लोचनानद कारी जयति समरसिंह क्ष्मापति सिंह वृत्ति ॥२॥ तथा ॥ औत्पत्तिकी प्रमुख बुद्धि चतुष्टयेन निर्णीत नृप भवनो चित कार्य वृत्ति। यन्मातुल समभवत् किल जोजनाहो।

(४) (दोर्द्दंड ?) खडित दुरत विपक्ष लक्ष ॥३॥ श्री चद्रगच्छ मुखमडन सुविहित यति तिलक सुगुरु श्री श्रीचन्द्र सूरि चरण नलिन मुक्त दुरित राजहंस श्री पूर्ण भद्रसूरि चरण कमल परिचरण चतुर मधुकरेण समस्त गोष्ठिक समुदाय समन्वितेन श्री श्रीमाल वश विभूषण श्रेष्ठि यशोदेव सुतेन मलसमासारि सिंह।

मदिर अय मडपो निर्मापित ।। तथा हि ।। नानादेश समागतै र्नव नवै स्त्री पु स वर्गेमुं [हु] र्यस्यै—

(६) ‥ · बावलोकन परैर्नो तृप्ति रासाद्यते । स्मार स्मारमयो यदीय रचनावैचित्र्य विस्फूर्जित तै स्वस्थान गतै रपि प्रतिदिन सोत्कठ मावर्ण्यते ।।४।। वि [श्व] भरावर वधू तिलक किमेतल्लीलारविंद मथ किं दुहितु पयोधे । दत्त सुरैरमृत कु डमिद किमत्र यस्यावलोकनविधौ विविधा विकल्पा ।।५।। गर्त्तापूरेण पाताल ।

(७) (विस्तारे ?) [ण] महीतल । तु गत्वेन नभो येन व्यानशे भुवन त्रय ।।६।। किंच ।। स्फूर्ज्जद् व्योम सर समीन मकर कन्यालि कु भा [कु] ल मेषाढच सकुलीर सिंह मिथुन प्रोद्यद्वृपालकृत । तारा कैरव मिंदुधाम सलिल सद्राज हसास्पद यावत्तावदिहादिनाथ भवने नद्यादसौ मडप ।।७।। कृतिरिय श्री पूर्ण्णभद्रसूरीणा ।। भद्रमस्तु श्री सघाय ।।

(२)

(१) ॐ ।। सवत् १२२१ श्री जावालिपुरीय काचन गि [रि] गढस्योपरि प्रभु श्री हेमसूरि प्रतिबोधित श्री गूर्ज्जरधराधोश्वर परमार्हत चौल्लक्य ।

(२) महारा [ज] ाधिराज श्री [कु] मारपाल देव कारिते श्री पा [र्श्व] नाथ सत्क मू [ल] बिंब सहित श्री कुवर विहाराभिधाने जैन चैत्ये । सद्विधि प्रव [र्त्त] नाय वृ [बृ] हद्गच्छीय वा—

(३) दीद्र श्री देवाचार्याणा पक्षे आचद्रार्क्कं समर्पिते ।। स० १२४२ वर्षे एतद्देसा [शा] धिप चाहमान कुल तिलक महाराज श्री समरसिंह देवादेशेन भा० पासू पुत्र भा० यशो ।

(४) वीरेण स[मु]द्धते श्रीभद्राजकुलादेशेन श्री दे[वा]चार्य शिष्यै श्रीपूर्णदेवाचार्ये । स० १२५६ वर्षे ज्येष्ठ सु० ११ श्री पार्श्वनाथ देवे तोरणादिना प्रतिष्ठा कार्ये कृते । मूल शिख—

(५) रे व च कनकमय ध्वजादडस्य ध्वजारोपण प्रतिष्ठाया कृताया ।। स० १२६८ वर्षे दीपोत्सव दिने अभिनव निष्पन्न प्रेक्षामध्यमडपे श्री पूर्णदेवसूरि शिष्यैः श्री रामचद्राचार्यै [·] सुवर्ण्णमय कलसारोपण कृता ।। सु (शु) भ भवतु ।। छ ।।

(३)

१ ॐ ॥ [स] वत् १३५३ [वर्षे]
२ वैं [शा] ख वदि ५ [सोमे] श्री
३ सुवर्णगिरौ अद्येह महा—
४ राजकुल श्री साम (म) तसिंह
५ कल्याण (ण) विजयराज्ये त —
६ त्पादपद्मोपजीविनि
७ [रा] जश्री कान्हड देव रा —
८ ज्यधुरा (मु) द्वहमाने इहै
९ व वास्तव्य सघपति गुणध —
१० र ठकुर आवड पत्र व (ठ) कुर
११ जस पु [त्र] सोनी महणसीह
१२ भार्या माल्हणि पुत्र [सोनी] रत—
१३ न [सि] ह णाखो माल्हण गजसीह
१४ तिहणा पुत्र [सो] नी नरपति ज —
१५ यता विजयपाल [न] रपति भा—
१६ र्या नायक देवि (वी) पुत्र लखमीध —
१७ र भुवणपाल [सु] हडपाल द्वि —
१८ तीय[भ]ार्या जाल्हण देवि(वी) इ—
१९ त्यादि कुटव (टुव) सहिते[न] भा —
२० र्या नायक देवि (वी) [श्र] योर्थे
२१ देव श्री पार्श्वनाथ चैत्ये पच—
२२ मी बलि निमित्त (त्त) निश्रा [नि] क्षे
२३ प [ह] ट्टमेक नरपतिना दत्त (त्त)
२४ तत् (द्) भाटकेन देव श्रीपा [र्श्व]
२५ नाथ गोष्टि (ष्ठि)[कैं प्रति व] प (र्ष)
२६ आचा (च) द्रार्क पचमी व (ब) लि
२७ कार्या (य) [॥ शुभ] भव [तु] ॥छ॥

(४)

(१) ॥ऐं०॥ सवत् १६८१ वर्षे प्रथम चैत्र वदि ५ गुरौ अद्येह श्री राठोड
वं शे सूर्यसिंह पट्ट श्री महाराज श्री गजसिंहजी ।

(२) विजयिराज्ये मुहणोत्र गोत्रे वृद्ध उसवाल ज्ञातीय सा० जेसा भार्या जयवतदे पुत्र सा० जयराज भार्या मनोरथ दे पुत्र सा० सादा सुभा सामल सुरताण प्रमुख परिवार पुण्यार्थं श्री स्वर्णगिरि गह (ढ) दु—

(३) र्गोपरिस्थित श्रीमत् कुमर विहारे श्रीमति महावीर चैत्ये सा० जेसा भार्या जयवतदे पुत्र सा० जयमलजी वृद्ध भार्या सरूपदे पुत्र सा० नहणसी सुन्दरदास आसकरण लघुभार्या सोहागदे पुत्र सा० जगमालादि पुत्र पौत्रादि श्रेयसे—

(४) सा० जयमलजी नाम्ना श्री महावीर बिंव प्रतिष्ठा महोत्सव पूर्वक कारित प्रतिष्ठित च श्री तपागच्छ पक्षे सुविहिताचार कारक शिथिलाचारण [निवा]रक साधु क्रियोद्धार कारक श्री आणदविमलसूरि पट्ट प्रभाकर श्री विजयदानसूरि —

(५) पट्ट शृगार हार महाम्लेच्छाधिपति पातशाहि श्री अकबर प्रतिबोधक तद्दत्त जगद्गुरु विरुदधारक श्री शत्रु जयादितीर्थं जीजीयादि करमोचक तद्दत्त षण्मास अमारि प्रवर्त्तक भट्टारक श्री ६ हीरविजयसूरि पट्ट मुकुटायमान भ०—

(६) श्री ६ विजयसेनसूरि पट्टे सप्रति विजयमान राज्य सुविहित शिर शेखरायमाण भट्टारक श्री ६ विजयदेवसूरीश्वराणामादेशेन महोपाध्याय श्री विद्यामागर गणि शिष्य पडित श्री सहजसागरगणि शिष्य प० जयसागर गणिना श्रेयसे कारकस्य ॥

(५)

(१) ॥ सवत् १६८३ वर्षे आषाढ वदि ४ गुरौ श्रवण नक्षत्रे ।

(२) श्री जालोर नगरे स्वर्णगिरि दुर्गे महाराजाधिराज महाराजा श्री गज सिहजी विजय राज्ये ।

(३) महुणोत्र गोत्र दीपक म० अचला पुत्र म० जेसा भार्य्या जंवतदे पु० म० श्री जयमल्ल नाम्ना भा० सरुपदेद्विती—

(४) या सुहागदे पुत्र नयणसी सु दरदास आसकरण नरसिहदास प्रमुख कुटु व युतेन स्व श्रेयसे ॥ श्री धर्म्म —

(५) नाथबिंव कारित प्रतिष्ठित श्री तपागच्छ नायक भट्टारक श्री हीर विजयसूरि पट्टालकार भट्टारक श्री विजयसेन [सूरिभि ?] ॥

(६)

(१) ॥ संवत् १६८३ वर्षे । आषाढ वदि ४ गुरौ सूत्रधार उद्धरण तत्पुत्र ताडा देवर ।

(२) शाह दूदा हीरानेन कारापित प्रतिष्ठित तपागच्छे भा० श्री विजयदेव-सूरिभिः ।

(७)

श्रीमदर्बुदतकाभिधे शिखरिणि श्रीतारणाद्रौ च य—
द्विख्याते भुवि नन्दिवर्द्धन गिरौ सौगंधिके भूधरे ।
रम्ये श्रीकल्याचलस्य शिखरे श्रीनाथ पार्श्वद्वयं
भूयात्प्रत्यहमेव देव ! भवतो भक्तयानतं श्रेयसे ॥

(८)

(१) ॥६०॥ संवत् १६८१ वर्षे प्रथम चैत्र वदि ५ गुरौश्री

(२) श्रीमुहनोतगोत्रे सा० जेसा भार्या जसमादे पुत्र सा० जयमल भार्या सरूपदेवी श्री आदिनाथ बिंब

(३) कारित प्रतिष्ठामहोत्सव पूर्वकं प्रतिष्ठितं च श्रीतपागच्छे श्री ६ विजयदेवसूरिणामादेशेन जयसागर गणिना (गिना) ॥

(९)

(१) संवत् १६८४ वर्षे माघ सुदि १० सोमे श्री मेडतानगर वास्तव्य ओस वंशीय—

(२) सोनेचा गोत्र तिलक सा० हर्षा लघु भार्या मनरंगदे सुत सकलपति—रामसिंहेन श्री सुपार्श्व बिंब कारित प्रतिष्ठितं श्री तपा गच्छे श्री—

(३) आणंदविमल भट्टारक श्रीविजयदेवसूरिभिः ॥ आचार्य श्रीविजयसिंहसूरि प्रमुख परिवार सहि कारितं । श्रीरस्तु ॥

(२) तत्पुत्र देवग देवधरस्या (?) पुत्रेण तथा जिनमति भार्या प्रोच्छा त्साहितेन श्रीसुविधिनाय देवस्य खतके द्वारकारित धर्मार्थमिति ।। मगल महाश्री ।।

(११)

९ सवत् १२९४ वपे (र्षे) श्रीमालीयश्रे० वीसल सुत नागदेव स्तत्पुत्रा देल्हा सलक्षण झापाख्या । झापापुत्रोवीजाकस्तेन देवड सहितेन पितृझापा श्रेयोर्थ श्रोजा (वा) लिपुरीय श्रीमहावीर जिन चैत्ये करोदि कारिता ।। शुभभवतु।।

(१२)

(१) ।। सवत् १३२० वर्षे माघ सु—
(२) दि १ सोमे श्रीनाणकीय ग—
(३) च्छ प्रतिवद्ध जिनालये सहा—
(४) राज श्रीचदनविहारे श्री—
(५) क्षीवरायेश्वर स्थाना (न) प—
(६) तिना भट्टारक रा [व] ल ल—
(७) क्ष्मीधरेण देवश्री म [हा]—
(८) वीरस्य आसौज मासे ।।
(९) अष्टाह्निका पदे द्रमाणा
(१०) १०० शतमेक प्रदत्त ।। तद्व्या
(११) जमध्यात (त्) मठपतिना गोष्ठि—
(१२) कैश्च द्रम १० दशक बेचनी
(१३) य पूजा विधाने देव श्रीमहावीरस्य ।।

(१३)

(१) ९० ।। सवत् १३२३ वर्षे मार्ग्गसु—
(२) दि ५ बुधे महाराज श्री चा—
(३) चिगदेव कल्याण विजय—
(४) राज्ये तन्मुद्रालकारिणि
(५) महामात्य श्री जक्षदेवे ।।
(६) श्रीनाणकीय गच्छ प्रतिबद्ध—
(७) महाराज श्री चदनविहारे
(८) विजयिनि श्रीमद्धनेश्वर
(९) सूरौ तेलगृहगोत्रोद्ध
(१०) वेनमह नरपतिना स्वय
(११) कारित जिनयुगल पूजा

(१२) निमित्त मठपति गोष्टि (ष्ठि) क—
(१३) नमश्च श्रीमहावीर देव —
(१४) भाडागार द्रम्माणा सता—
(१५) र्द्ध प्रदत्त ।। तद्व्याजोद्भवे —
(१६) न द्रम्मार्द्धेन नेचकमाम
(१७) प्रति करणीय ।। शुभमवतु ।।

(१४)

गौडीपार्श्वनाथ चरण पव्वासन पर

श्री परमात्मने नम । नवद्वैश्वानर कृतिका तनयानन नाग-रोहिणीरमण (१८६३) प्रमिते वसु नयनाश्ववसु धरा (१७२८) परिमिते शके च प्रवर्त्तमाने मासोत्तम-फाल्गुन-मास वलक्ष पक्षे द्वादशी १२ तिथौ भृगुवासरे कु दकुमुदचच चारुचन्द्रचन्द्रिकाति विशद विलसद्यशोवितान धवलिताखिल जगन्मडलेषु, तरुण तरणिमडल समप्रभाऽखडाऽस्खलित जयोरथ तापज्वल ज्ज्वालामाला-वलीदर्वेरि जन काननोद्भूत प्रभूत धूमधूमरित गीर्वाणपथेषु, राजराजेश्वर महाराजाधिराज श्री १०८ श्रीमानसिंघेषु, तत्सुत श्रीमन्महाराज राजकुमार श्री छत्रसिहजी विजय राजित श्रीजालोर दुर्गे श्रीमद्गवडी पार्श्वनाथ जिनेन्द्राणामय प्रासाद, श्रीबृहद् खरतर भट्टारकीय गच्छाधिराज जगमयुगप्रधान-भट्टारक श्रीजिनहर्षसूरीश्वरै प्रतिष्ठित । ओर वशोद्भव-वदाभिधान गोत्रीय मुत्प्रमत्री मु० अभयचन्द्रेण सुत-लक्ष्मीचद्रयुतेनाऽय प्रासाद कारितश्च । कारिगर सोमपुरा रामाराम-कृत ।

चौमुख मंदिर में ऋषभदेव जी के पबासन पर*

सम्वच्छुभे त्र्यस्त्रिनन्दैके विक्रमाद्वरे ।
माघ मासे सिते पक्षे, चन्द्रे प्रतिपदा तिथौ ॥१॥

जालन्धरे गढे श्रीमान्, श्रीयशस्वन्त सिंह राट् ।
तेजसा द्युमणि साक्षात्, खण्डयामास यो रिपून् ॥२॥

विजयसिंहश्च किल्लादारधर्मी महावली ।
तस्मिन्नवसरे सघे जीर्णोद्धारश्च कारित ॥३॥

चैत्य चतुर्मुख सूरिराजेन्द्रेण प्रतिष्ठितम् ।
एव श्री पार्श्वचैत्येऽपि प्रतिष्ठा कारिता वरा ॥४॥

ओसवशे निहालस्य, चोधरी कानुगस्य च ।
सुत प्रतापमल्लेन, प्रतिमा स्थापिता शुभा ॥५॥

---

* न जाने कब इन मन्दिरो पर कब्जा करके राज्य-कर्मचारियो ने सरकारी युद्धसामग्री आदि भर के इनके चारो ओर काटे लगवा दिये थे । वि०स० १९३२ मे जब श्रीमद्विजयराजेन्द्रसूरिजी महाराज जालोर पधारे तो उनसे जिनालयो की यह दशा नही देखी गई । आपने तत्काल राजकर्मचारियो से मन्दिरो की माग की और उन्हे अनेक प्रकार से समझाया। परन्तु जब वे किसी प्रकार न माने तो सूरिजी ने दृढता पूर्वक घोषणा की कि जब तक तीनो जिनालयो को राजकीय शासन से मुक्त नही करवाऊगा, तब तक मैं नित्य एक ही बार आहार लूगा और द्वितीया, पचमी, अष्टमी, एकादशी, चतुर्दशी और अमावस्या तथा पूर्णिमा को उपवास करूगा । आपने स० १९३३ का चातुर्मास जालोर किया और योग्य समिति बनाकर वास्तविक न्याय प्राप्त करने के हेतु उन्हे जोधपुर नरेश यशवतसिहजी के पास भेजे ।

कार्यवाही के पश्चात् राजा यशवतसिहजी ने अपना न्याय इस प्रकार घोषित किया—'जालोरगढ (स्वर्णगिरि) के मन्दिर जैनो के हैं, इसलिए उनका मन न दुखाते हुए शीघ्र ही मन्दिर उन्हे सौप दिए जाए और इस निमित्त उनके गुरु श्रीराजेन्द्रसूरिजी जो अभी तक आठ महीनो से तपस्या कर रहे हैं, उन्हे जल्दी से पारणा करवा कर दो दिन मे मुझे सूचना दी जाय ।'

श्रीराजेन्द्रसूरिजी के उपदेश से जीर्णोद्धार हुआ और स० १९३३ मा० स० १ रविवार को महोत्सवपूर्वक प्रतिष्ठा करके उन्होने नौ उपवास का पारणा किया। उपर्युक्त शिलालेख अष्टापदावतार चौमुख जी के मन्दिर मे लगा हुआ है ।

स्वर्णगिरि पर स्थित पुस्तकालय में रखी हुई खंडित मूर्तियों पर निम्न अभिलेख हैं

॥६०॥ सवत् १६८१ वर्षे प्रथम चैत्र वदि ५ गुरो।

॥ अद्येह श्री जालोर महादुर्ग वास्तव्य श्री कावेडिया कोठारी गोत्रे प० जगचन्द भार्या जसमादे पुत्र ॥ म० रूपसी भार्या राजलदे पुत्र म० पदमसी भार्या सोहागदे पुत्र म० रहिया केसव द्वितीय पुत्र म० देवसी भार्या रंगादे पुत्र समरथ द्वितीय भार्या दाडिमदे पुत्र मानसि नेतसी तृतीय पुत्र धरमसी भा० दाडिमदे। पु० पुर । प्रमुख कुटुम्ब श्रेयसे श्रीमहावीर बिंब कारित प्रतिष्ठित तपा गच्छे श्रीहीरविजयसूरि श्रीविजयसेनसूरि पट्टे श्री विजयदेवसूरिणा आदेशेन प० सहजसागर शिष्य जयसागर गणिना ॥

६० ॥ स० १६८१ वर्षे प्रथम चैत्र वदि ५ गुरो श्री राठौड वंशे महाराज श्री गजसिंहजी राज्ये। श्री मुहणोत्र गोत्रे सा० ठाकुरसी भार्या जयवन्तदे पुत्र सा० जयमल भार्या राजलदे पुत्र सा० श्री सुन्दरदास भार्या श्री कुंथुनाथ बिंब कारित प्रतिष्ठित च श्रीतपा गच्छे श्री विजयदेवसूरिभि ॥

६० ॥ १६८१ वर्षे चैत्र वदि ५ चारवेडया गोत्रे म० राजसी भार्या [illegible] श्री नमिनाथ बिंब कारित प्रतिष्ठित श्री तपागच्छे श्री ६ विजयदेव सूरिणा [illegible] जयसागरण ।

स० २०२९ वैशा० शु० ६ मु० केसवणा वा० घोडा भूरमल ओटमल हस्ती० छगन मुनिसुव्रत बि० का० श्रे० पन्नालाल पारसमल सा० वा० श्री प्रतिष्ठाया प्रति बिं० का० प० श्री कल्याण श्री सोभा मुनि मुक्ति परि श्री जावालीपुरे ।

सा १९४८ माघ सीत ५ प्रतिष्ठा कृता भ । राजेन्द्र ।

चरण स० १९५५ फागुन कृष्ण ५ गुरौ समस्त सघेन वर्धमान जिन पगल्या कारित प्रतिष्ठित भट्टारक श्री विजयराजेन्द्रसूरिभि प्रतिष्ठाकृता जसरूपजी ताभ्या आहो ।

सवत् १७७० वर्ष वैशाख सुदि १२ सत्रा सत्रधर टाहात सत्रा पाताकेन सत्र चतरभुज । (चौमुख मन्दिर के बाहर दिबाल पर) ।

जालोर नगर मे तोपखाना नाम से प्रसिद्ध स्थान जो डी० आर० भण्डारकर के अनुमार कम से कम चार देवालयो की सामग्री से निर्मित है जिनमे एक तो सिन्धुराजेश्वर नामक हिन्दु मन्दिर और अन्य तीन आदिनाथ, पार्श्वनाथ और महाबीर स्वामी के जिनालय थे, इनमे पार्श्वनाथ जिनालय किले पर था ।

१—यह लेख इस तोपखाना के परसाल के एक कोने के स्तभो पर उत्कीर्णित है । पहले एक श्लोक मे भ० ऋषभदेव की स्तुति है और बाद मे गद्य मे महाराजा कीर्त्तिपालदेव के पुत्र समरसिंह देव का उल्लेख है ये कीर्त्तिपालदेव चौहान वश रूप आकाश मे चन्द्र के समान, अणहिलान्वयोद्भव महाराजा आल्हण के पुत्र थे । फिर राजपुत्र जोजल का नाम है जो पीलवाहिका मडल के तस्कर का दमनकारक था । बाद के श्लोक मे समरसिंह का वर्णन है । ये जोजल इनके मामा थे और परबतसर प्रान्त का पालवा ही उपर्युक्त पीलवाहिका मडल होगा । जिस मन्दिर के मडप का यह लेख है उसका निर्माण श्रीमालवश के सेठ यशोदेव के पुत्र परम श्रावक यशोवीर ने अपने भ्राता यशोराज, जगधर आदि के साथ कराया था । चन्द्रगच्छ के आचार्य श्रीचन्द्रसूरि के शिष्यपूर्णभद्रसूरि का यह यशोवीर भक्त था और मडप का निर्माण काल स० १२३९ वैशाख सूदि ५ (ई० सन् ११८३ ता० २८ अप्रेल) गुरूवार है । श्लोक ४ से ७ पर्यन्त मण्डप की प्रशसा की हुई है ईस प्रशस्ति की रचना श्रीपूर्णभद्रसूरि ने की है ।

२—दूसरा लेख भी इसी तोपखाना की मेहराब पर लगा हुआ है । स० १२२१ मे श्री जावालिपुर के काचन (सुवर्ण) गिरि गढ पर हेमचन्द्राचार्य प्रतिबोधित गूर्जरेश्वर चौलुक्य परमार्हत् महाराजा कुमारपाल द्वारा निर्मापित

पार्श्वनाथ मूलनायक युक्त 'श्री कुमर विहार' नामक जिनालय में सद्विधि प्रवर्तित हो, इसलिए बृहद् गच्छीय वादीन्द्र श्री देवाचार्य के पक्ष-समुदाय को सदा के लिए दिया। फिर सं० १२४२ में देशाधिपति चौहान श्री समरसिंहदेव की आज्ञा से भां० (भाण्डागारिक-भण्डारी या भण्डशाली) पासू के पुत्र भां० यशोवीर ने इसका समुद्धार किया। फिर सं० १२५६ ज्येष्ठ सुदि ११ के दिन राजाज्ञा से श्री देवाचार्य के शिष्य पूर्णदेवाचार्य ने पार्श्वनाथदेव के तोरणादि की प्रतिष्ठा की और मूल शिखर पर स्वर्णमय दण्ड-कलश और ध्वजारोपण की प्रतिष्ठा की। फिर सं० १२६८ में दीपोत्सवी के दिन नवीन निर्मित प्रेक्षामण्डप की प्रतिष्ठा श्री पूर्णदेवसूरि के शिष्य श्री रामचन्द्रसूरि ने स्वर्णमय कलशों की स्थापना-प्रतिष्ठा की।

वादिदेवसूरि के प्रशिष्य और जयप्रभसूरि के शिष्य रविप्रभभद्र ने 'प्रबुद्ध-रौहिणेय' नामक सुन्दर नाटक की रचना इसी यशोवीर के निर्मापित आदिनाथ जिनालय में यात्रोत्सवादि में खेलने के लिए की थी। इसके प्रारम्भ में ही सूत्रधार के मुँह से यशोवीर की निम्न वाक्यों द्वारा प्रशंसा की है। सूत्रधार— श्री चाह-मानान्वय लक्ष्मीपति पृथुल वक्षःस्थल कौस्तुभायमान निरुपमान गुण गण प्रवरो श्री श्री पासन तनयस्फुरति विहिता सपत्न प्रयत्नोत्करो प्रोद्दाम दान वैभवाद्भुत विश्व कीर्ति केतकी प्रबल परिमलोद्गार वासिता शेष दिगन्तरालो किं नो। भां० यशोवीर—श्री अजयपालो ?

यो मालती विच किलोज्ज्वल पुष्पदन्तो
यो पार्श्वचन्द्र कुल पुष्कर पुष्प दन्तो
राजप्रियो सतत सर्वजनीन चित्तो
कस्तो न वेत्ति भुवनाद्भुत वृत्त चित्तो ॥

३—यह लेख उपर्युक्त तोपखाने की पश्चिमी परसाल के स्तम्भ पर उत्कीर्णित है। यह २७ पक्ति का लेख स० १३५३ वैशाख वदि ५ (ई० १२९६ ता० २३ अप्रैल) सोमवार का है। सुवर्णगिरि के नरेश्वर महाराउल सामतसिह और उनके पादपद्मोपजीवी श्री कान्हडदेव के राजज्यकाल मे नरपति नामक श्रावक ने अपनी धर्मपत्नी नायकदेवी के पुण्यार्थ अपने उस मकान को जो बाहर के लिए चालान होने वाले माल को रखने मे काम आता था, धर्मदाय रूप मे भेंट किया। उसके भाडे की आमदनी से प्रतिवर्ष श्री पार्श्वनाथ देवालय मे पचमी के दिन विशेप पूजादि कार्य कराये जाए, यह उद्देश्य था। इस लेख मे यही के अधिवासी सघपति गुणधर का नाम और ठकुर आवड की वशावली दी है। उसके पुत्र ठकुरजस के पुत्र सोनी महणसिह का पुत्र ही दानपति-नरपति था। महणसिह के दो पत्निया थी। माल्हणि और तिहुणा। माल्हणि के रत्नसिह, णाखो, माल्हण और गर्जसिह नामक पुत्र थे। दूसरी पत्नी तिहुणा के नरपति, जयता और विजयपाल तीन पुत्र थे। इन सबकी 'सोनी' उपाधि थी। नरपति के दो स्त्रियाँ थी। १ नायक देवी और २ जाल्हण देवी। नायक देवी के पुत्र लखमीधर, भुवणपाल और सुहडपाल थे। नरपति की प्रथम स्त्री नायक देवी के पुण्यार्थ उसके परिवार द्वारा यह धर्मदाय भेंट की गई थी।

४—स० १६८१ चैत्र वदि ५ गुरूवार को राठौड सूरसिह के उत्तराधिकारी गर्जसिह के राज्य मे मुहणोत ओसवाल सा० जेसा की भार्या जयवतदे के पुत्र जयराज भार्या मनोरथदे के पुत्र सा० सादा, सुभा, सामल, सुरतान आदि सपरिवार ने सुवर्णगिरि दुर्ग स्थित कुमरविहार के श्रीमहावीर चैत्य मे जेसा-जसवतदे के पुत्र सा० जयमलजी जिनकी वडी भार्या सरुपदे के पुत्र सा० नयणसी, सुन्दरदास, आसकरण थे और लघु भार्या सोहागदे के पुत्र सा० जगमालादि पुत्र पौत्रो के श्रेयार्थ सा० जयमलजी ने श्रीमहावीर विम्व की प्रतिष्ठा महोत्सव पूर्वक सुविहित क्रियोद्धारक तपागच्छीय श्री आणदविमलसूरि के पट्टप्रभाकर श्रीविजयदानसूरि-हीरविजयसूरि-विजयसेनसूरि के पट्ट स्थित श्रीविजयदेवसूरि के आदेश से महोपाध्याय विद्यासागर शि० सहजसागर के शि० प० जयसागर गणि ने की।

५—स० १६८३ आपाट वदि ४ गुरूवार को जालोर-स्वर्णगिरि दुर्ग पर महाराज गर्जसिह के राज्यकाल मे मुहणोत स० अचला के पुत्र स० जेसाभार्या जैवतदे पुत्र स० जयमल भार्या १ सरूपदे २ सुहागदे पुत्र नयणसी, सुन्दरदास, आसकरण, नरसिहदास आदि कुटुम्ब सहित अपने श्रेयार्थ श्रीधर्मनाथ प्रतिमा कराके उपर्युक्त तपा गच्छीय श्रीहीरविजयसूरिजी के पट्टालकार श्रीविजयसेन सूरि ने प्रतिष्ठा की।

६—सं० १६८६ आषाढ़ वदि ८ गुरुवार को सूत्रधार उद्धरण के पुत्र [illegible], ईसर, टाहा, दूगा, हीराने बनवाई और आ० विजयदेवसूरि ने प्रतिष्ठा की।

७—यह लेख किस स्थान में खुदा है पता नहीं, केवल १ श्लोक है जिसमें [illegible]गिरि, शिखर, [illegible]णाद्रि, नन्दिवर्द्धनगिरि, सौगन्धिक पर्वत, श्री[illegible]पर्वत पर श्रीपार्श्वजी के चरण वन्दना का उल्लेख है।

८—सं० १६८१ मिती चैत्र वदि ५ गुरुवार को मुहणोत सा० नेमा-[illegible] के पुत्र सा० जयमल भार्या सोहागदेवी ने श्री आदिनाथ भगवान की प्रतिमा बनवाकर श्री महोत्सवपूर्वक तपा गच्छाचार्य श्रीविजयदेवसूरि के आदेश से जयसागर गणि ने प्रतिष्ठित करवाई।

९—सं० १६८४ माघ सुदि १० सोमवार को मेड़ता निवासी ओसवाल [illegible] सा० हर्षा की [illegible] भार्या मनरगदे पुत्र [illegible] ने श्रीकुंथुनाथ बिंब बनवाकर तपागच्छीय श्री विजयदेवसूरि आचार्य विजयसिंहसूरि [illegible] प्रतिष्ठा कराई।

१३—स० १३२३ मार्गशीर्ष शुक्ल ५ बुधवार को चाहमान महाराजा चाचिगदेव के राज्य काल मे महामात्य यक्षदेव जो उसका मुद्राधिकारी था—के समय नाणकीय गच्छ प्रतिबद्ध महाराज श्री चदन विहार मे धनेश्वरसूरि के विजय शासन मे तेलहरा गोत्रीय मह० नरपति ने अपने निर्माण कराये हुए जिन युगल की पूजा के निमित्त मठपति व गौष्टिक के समक्ष ५० द्रम्म महावीर स्वामी के भडार मे प्रदान किये जिसके व्याज अर्द्ध दम्म प्रतिमास की आमदनी से पूजा कराई जाय, ये उल्लेख है। यह लेख भी तोपखाना के जनाना गेलेरी मे है।

१४—स० १८६३ (शक स० १७२८) फाल्गुन शुक्ल १२ भृगुवार के दिन महाराजाधिराज श्री मानसिंह जी और महाराज कुमार श्री छत्रसिंह जी के विजय राज्य मे जालोर दुर्ग मे श्री गौडी पार्श्वनाथ भगवान का यह प्रासाद वृहत्खरतर गच्छीय युग प्रधान भट्टारक श्री जिनहर्षसूरि जी ने प्रतिष्ठित किया ओसवाल वश के बदा (मेहता) गोत्रीय मुख्य मत्री मुहता अखयचद्र ने अपने पुत्र लक्ष्मीचद सहित इस प्रासाद का निर्माण कराया। सोमपुरा कारीगर काशीराम ने बनाया।

यह लेख जालोर से पश्चिमोत्तर कोण मे लाल दरवाजे से चारफर्लांग दूर परकोटे के बीच बने हुए गौडी पार्श्वनाथ जिनालय के चरणो मे पर खुदा हुआ है।

प्राचीन जैन लेख सग्रह (जिनविजय) के लेखाक ६६ मे लूणिवनसही शिलालेख की पक्ति १३-१४ मे ॥ "श्री जावालिपुरे श्री पार्श्वनाथ चैत्य जगत्या श्री आदिनाथ बिंबदेव कुलिका च" फिर पक्ति ३३ मे—"श्री जावालिपुरे श्री सौवर्णगिरौ श्री पार्श्वनाथ जगत्या अष्टापद मध्ये खत्तकद्वय च" ॥ ये नागपुरीय वरहुडिया परिवार द्वारा अनेक स्थानो के मदिरादि निर्माण का उल्लेख है—राहड के पुत्र जिनचन्द्र भार्या चाहिणी के पुत्र देवचन्द्र ने पितामाता के श्रेयार्थ बनाया था।